Chapter 5

SMT. HANSA MEHTA LIBRARY

पंचम अध्याय

गुजरात में व्याप्त अन्य संप्रदाय तथा उनका साहित्य

* सूफी संप्रदाय और उसका साहित्य प्रदान
* प्रमाणी सम्प्रदाय और साहित्य प्रदान
* रामानंद सम्प्रदाय
* कबीर पंक का गुजरात में आविर्भाव
* रवि भाण सम्प्रदाय

पंचम अध्याय

गुजरात में व्याप्त अन्य संप्रदाय तथा उनका साहित्य

सूफी संप्रदाय और उसका साहित्य प्रदान

गुजरात में फक्कड़ साधु संतों का आवागमन बहुत पहले से है। यहाँ यायावर साधु एवं सूफी संतों का आना-जाना जब निरंतर लगा रहा तब इनके अखाड़े, आश्रम और मंदिर भी स्थापित हो गए। होता यह था कि कोई भी साधु या संत इस प्रांत के किसी भी नगर या गाँव में एक ही जगह पर बहुत समय नहीं रहता था, किन्तु वह अपना आश्रम या अखाड़ा स्थापित करके अपने अनुयायियों का एक समुदाय बनाकर और किसी विशिष्ट शिष्य को वहाँ का मठाधीश या उत्तराधिकारी संत घोषित कर आगे प्रस्थान कर जाता था। गुजरात के गाँव-गाँव में इस प्रकार के साधु-संतों के अखाड़े या धर्म-स्थान अधिकांशतः वस्ती के सीमांत पर स्थित हैं।

ये साधु-संत और सूफी मत के प्रचारक निर्गुण निराकार ईश्वर की उपासना पर बल देते और समाज में व्याप्त अंधविश्वासों एवं रूढियों का विरोध करते थे, सांप्रदायिक एकता की बात करते थे। एतदर्थ इनके अनुयायी अधिकांश तौर पर निर्धन वर्ग या दलित वर्ग से ही होते थे। संप्रदाय या मठ के कार्यों के लिए यहाँ वहाँ घूमने व एक जगह पर स्थायी जीवन न रह जाने के कारण सामान्यतः ये अनुयायी घर ग्रहस्थी त्यागकर विरक्त जीवन व्यतीत करते थे।

गुजरात में इस प्रकार के निर्गुणिया संतों की एक लंबी परंपरा रही है जो मूल रूप

से कबीर पंथी थे या फिर सूफी दर्शन से संबधित अपना स्वतंत्र सम्प्रदाय स्थापित करने वाले फक्कड़ निर्गुण संत थे। इनमें विशेषकर कबीरपंथी, दादू पंथी, रविदास के अनुयायी, राम कबीर या पंथ के तथा सूफी संतों के अखाड़े या आश्रम आज भी गुजरात में स्थान-स्थान पर देखे जा सकते है। यहाँ हम मुख्य रूप से संक्षिप्त में कुछ प्रतिनिधि ऐसे साधु संतों का विवरण प्रस्तुत कर रहे हैं। जिनका अवदान समाज में भी रहा है और जिनकी साहित्यिक कृतियाँ भी विद्वत वर्ग में स्वीकार हुई हैं।

सूफी

सूफी मत की प्रसूति भारत के निकटवर्ती मुस्लिम देशों से मानी जाती है, खासकर सूफी मत बहुत कुछ इरान का ही प्रसाद है और वहीं के साहित्य से उसके अंग-प्रत्यंग पल्लवित हुए। परंतु अपने प्रकृत रूप में यह प्रेममार्ग है। इस मत के अंतर्गत जीव को ईश्वर का अंश माना गया है। वह उस अविनाशी से भयभीत नहीं होता, उसकी पूजा नहीं करता, उसका सत्कार भी नहीं करता, वह केवल उससे प्रेम करता है और सदैव उसका सामिप्य, सानिध्य चाहता है। चाहें तो भारतीय दार्शनिक बोली में इस पद्धति को माधुर्य अथवा मादन भाव की भक्ति कह सकते हैं। वह आडम्बर, बाह्याचार पसंद नहीं करता, वह किसी परंपरा, धार्मिक ग्रंथ एवं रीति का भी कायल नहीं है, उसकी दृष्टि समभाव की दृष्टि है, वह सभी से प्रेम, सहानुभूति रखता है। अब्दुल हसन मुहम्मदईन अहमद-अल फारसी के अनुसार सूफी के दस व्रत हैं-सम्बन्ध -विच्छेद, श्रवण-शक्ति की यथार्थता, मैत्री, पूर्व व्यवस्था की सुविधा, स्वेच्छाका परिहार, भावोन्माद की प्रचुरता, विचारों का रहस्योदघाटन, पर्यटन प्रियता भावावेश का प्रस्फुटन तथा परिग्रह वृत्ति[1] का निरोध, परन्तु यह स्वभावतः धार्मिक प्रतिबन्धों का बागी होता है। कुछ विद्वानों का निष्कर्ष है कि ''सूफी मत इस्लामी विधानो'' के प्रतिक्रिया का परिणाम है।[2] इश्वर के वियोग में वह दिन-रात तड़पता है, उसको प्रत्येक वस्तु उसी के वियोग में जलती हुई दिखाई देती है। अतएव वह, उस समय की बड़ी लालसा से प्रतीक्षा करता है जब 'पिय्रतम' का दीदार नसीब होगा-वह मृत्यु के आलिंग को सदैव उतावला रहता है।[3] यही सूफी मत की विशेषता है।

भारत वर्ष में इस्लाम धर्म का प्रवेश यों तो आठवीं शती में हो गया था, तथा सिन्ध एवं पंजाब का हिस्सा इस्लाम धर्म के प्रचार एवं प्रसार का प्रमुख केन्द्र बन गया था। फिर

भी तेरहवीं, चौदहवीं सदी में मुस्लिम धर्म प्रचारकों और सूफियों का पूरा ज़ोर हमारे देश के विभिन्न भागों में दिखाई देता है। बारहवीं सदी के उत्तरार्ध में जब महम्मद गोरी ने भारत पर आक्रमण किया उस समय उचःबहातलपुर इस्लामी विद्या का बहुत बड़ा केन्द्र था। यही से सिन्धु गुजरात और दक्षिण-पश्चिमी पंजाब में इस्लाम धर्म का प्रचार हो रहा था। इसके पश्चात यहाँ पर कई सूफी साधक आये । [4]

गुजरात में मध्यकाल में प्रचलित खड़ीबोली हिन्दी अर्थात गुजरी भाषा के उद्भव विकास मे सूफी संतोंका महत्तम योगदान रहा है। भारत में इसा की आठवीं सदी तक अनेक अरब और इरानी व्यापारी यहाँ बस गए थे।

भारत में मुसलमानों की सत्ता की स्थापना से बहुत पहले गुजरात में हर जगह मुसलमान विपुल संख्या में स्थायि हो चुके थे। गुजरात में मुस्लिम सूफियों के आने का सिलसिला सिद्धराज जयसिंग के समय से शुरू हुआ था मुसलमानों के यहाँ आने के साथ साथ उनकी भाषा फारसी उर्दू भी आइ ।

इस प्रकार गुजरात में मुसलमानों के रस बस जाने के कारण यहाँ की भाषा पर उनका प्रभाव पड़ा। गुजराती से भिन्न एक नई भाषा या अरबी-फारसी युक्त एक भाषा शैली का अविर्भाव हुआ, जिसे गुजरी, गूजरी या बोली गुजरात कहा जाने लगा। आम जनता के अतिरिक्त सुलतानों के दरबार में भी गुजरी भाषा का चलन था । [5]

डॉ. अम्बाशंकर नागर ने गुजरात के अंचल से प्राप्त 'गुजरी अथवा गूजरी भाषा' को खुसरो की हिन्दवी और दक्षिण के कवियों की दख्खिनी के बीच की कड़ी माना है। [6]

गुजरात के सूफी कवियों द्वारा अपनी भाषा को गुजरी, हिन्दी, हिन्दुस्तानी, हिन्दवी और दहलवी आदि नाम दिए गए है।

गूजरी-साहित्य के विकास में सूफियों का योगदान महत्वपूर्ण रहा हैं।

शेख अहमद खट्टू (1336-1446 ई.) और बुरहानुद्दीन कृत्बे आलम बुखारी (1344-1453इ.) से गुजरातमें गूजरी की इस सूफि साधना का प्रारम्भ माना जाता है। ये उच्चकोटि के सन्त थे तथा यहाँ की समान्य जनता को गूजरी में उपदेश देते थे। इनके अतिरिक्त शाह आलम, शेख बहाउद्दीन बाझन, शाह अली गामधनी, मियाँ खूब मुहम्मद

चिश्ती, बाबाशाह हुसैंनी, इशा चिश्ती, सैयद पीर मशाइख चिश्ची, शेख महुम्मद अमीन आदि अनेक सूफी संत एवं कवि गुजरात में हुए है। इन्होंने अनेक मसनवियाँ, ऐतिहासिक कृतियाँ और स्फुट रचनाएँ गूजरी में की है। वली के बाद गूजरी में रचना करनेवाले सूफियों की परम्परा प्रायः समाप्त हो जाती है, और गुज़रात में उर्दू काव्य-परम्परा का प्रवर्तन होता रहा।[7]

इस शोध-प्रबंध में गुजरात के उन्हीं सूफी फकीरों और कवियों पर विचार किया गया है, जिन्होंने गुजरात में खड़ी बोली की परम्परा को जन्म दिया साहित्यिक दृष्टि सें इन कवियों की रचनाएँ अधिक महत्वपूर्ण न होते हुए भी खड़ी बोली के विकास के अध्यपन की दृष्टि से बड़ी उपयोगी हैं। शेख बहाउद्दीन बाझन, काज़ी महमूद दारियायी, शाह अलीजी गामधनी, बाबा शाह हुसेनी, हज़रत मुहम्मद चिश्ती, शेख अहमद खट्टू और हसन जस आदि गुजरात के ऐसे सूफी संत और कवि हैं जिन्होंने गूजरी हिन्दी में रचनाएँ की है। इन सूफी संतों के कृतित्व का संक्षिप्त परिचय यहाँ हम देखेंगे।

शेख अहमद खट्टू :

ये सन् 1405 में अहमबाद आए थे। इनका मकबरा सरखेज, अहमदाबाद मैं है। उनके जीवन चरित्र **'मिकातुल वुसूल'** में कुछ दोहे मिलते है-

''दुःखाकाजल से करूं तो सोकन दुःख दीन्हा
न पियु देखन दीना मंजु न आप देख सकीना
तूं जानता करवात जी मुंज साई बिसरा
साई की है सार पिंजरामां जो मन बसे[8]

शेख बहाउद्दीन बाजन (सं.1448 से 1562)

''गूजरी'' के कवियों की एक लम्बी परम्परा भारत के प्राचीनकाल से उपलब्ध होती है। इन सभी मुसलमान संतों की भाषा जिसकी प्रकृति खड़ी बोली की है। ''दखिनी'' के साथ अपूर्व साम्य रखती है। गुजराती साहित्य एवं गुजरात के उर्दू साहित्य के इतिहासों में भी इनमें से अनेक कवियों की रचनाओं का परिचय प्राप्त होता है।

इस परम्परा के सूफी संतों में शेख बहाउद्दीन बाजन का नाम अत्यन्त प्राचीन तथा प्रमुख है। ये अहमदाबाद के थे। इनका समय 612 हिजरी अर्थात विक्रम की पंद्रहवी शती उत्तरार्ध माना जाता है। इनके काव्य में भले ही तसलुफ और भारतीय दर्शन का समन्वय प्राप्त होता है परन्तु छन्द विधान भारतीय है। काव्य रचना के साथ साथ इन्होंने हिन्दू एवं मुस्लिम संस्कृति में समन्वय स्थापित करने का कार्य भी किया है। इनका अभी तक उपलब्ध काव्य संग्रह ''खजाना ए रहमत'' है। भाषा की दृष्टि से इनकी रनचा का एक उदाहरण दृष्टव्य है।-

''यूँ बाजन बाजे रे इसरारछाजे ।

मंडल मन में धमके

रबाब रंग में झनके,

सूफी उन पर ठमके ।

यूँ बाजन ब जे रे इसरार छाजे ॥'' [9]

शेख बहाउद्दीन बाजन की गणना उर्दू के आदि कवियों में की जाती है। [10] परन्तु उन्होंने स्वयं अपनी भाषाको हिन्दी और गूजरी कहा है। उन्होंने जिस भाषा को हिन्दी कहा है, वह उपरोक्त उदाहरण द्वारा ज्ञात होता है।

इनकी रनचा शैली के अन्य उदाहरण ध्यातव्य है-

1) **भौंरो लेवे फूल रस, रसिया लेवे बास,**

माली सींचे आशकर, भौंरा खड़ा उदास ।

2) **बाजन जीव अमर अहे मूवा न कहियो कोय**

जो ए कोई मूवा कहे, मूवा ए ही होय । [11]

उनकी जकरियाँ काव्वालों में खूब प्रचलित थी।

''बाझन'' ने अपनी गूजरी कविता को विशेष राग रागिनियों में गाने के लिए लिखा है।

काजी महमूद दरियायी : 1468-1534 इ) (1522इ)

सो.लहवीं शती पूर्वार्द के सूफी सन्तो में इनका नाम उल्लेखनीय है। इनका जन्म गुजरात के बालाशिनोर के पास वीरपुर गाँव में हुआ था। इनका देहान्त सन् 1521 में 67 वर्ष की आयु में हुआ । इनके पिता काजी हमीद उर्फ शाहचलंदा भी पहुँचे हुए फकीर थे, दरिया के मुसाफिरों के वली होने के कारण शाहचलंदा दरियायी कहे जाने लगे। इन्होंने हिन्दी में भी कुछ उपदेश दिए है। इन्हों ने खास तर्ज की नज्म जिसे 'जकरी' कहा जाता है,लिखी है।

इनकी रनचा शैली की निम्नलिखित उदाहरण से पुष्टि भी हो जाती है-

''पाँचो वक्त नमाज गुजारूँ

कायम पढूँ कुरान ।

खावो हलाल, बोलो मुख साचा,

राखो दुरुस्त इमान ।'' [12]

काजी महमूद दरियायी की संगीत में रुचि तथा राग-रागिनियों से भली भाँति परिचित होने से संगीत प्रधान जकरियों लिखी दाउद नामी कव्वालने इनकी जकरियों की भाषा को गुजरी काहा है। इनका यह गूजरी काव्य प्रेमलक्षणा भक्ति में डूबा हुआ है। विरह की वेदना उनके काव्य का प्रमुख लक्षण है।

राग मल्हार :

आयोरी मुझ मिलन के काज,

तुझ पर प्यार मेरा है आज ।

तपती थी नित जपती थी।

तुझ कारन भी खपती थी। [13]

शाह अलीगामधनी : 16 वीं शती लगभग

इनका समय 660 हिजरी अर्थात संवत् 1571 के आसपास माना जाता है। ये ''गूजरी परम्परा'' के महत्वपूर्ण सूफी संत है। मुहम्मद शाह अली गामधनी सैयद अहमद कबीर मज़ार रिफाइकी के वंशज थे।

इनका मजार अहमदाबाद के यायरवड में है। मिराते अहमदी में इनके कलाम कीं प्रशंसा की गई है। वे मशहूर सूफी संत थे। इनका दीवान ''जवाहिरे इसरारुल्लाह'' [14] के नाम से प्रसिद्ध है । जो इस प्रदेश की धर्मप्राण मुसलमान जनता में अब भी लोक प्रिय है। इनका एक नज़्म संग्रह मिलता है जिस में अद्वैतवाद के समन्वय का प्रयास है और अपने इष्टदेव के प्रति गहन अनुभूतियों से परिपूर्ण प्रेम से ओत-प्रोत अभिव्यक्तियाँ हैं। इनकी भाषा साफसूतरी एवं स्पष्ट है।

वही सो माजून हो बरसावे

कहीं सो लैला हो दिखावे

कहीं सो खुसरो शाह कहावे,

कहीं सो शीरी होकर आवे [15]

इनकी भाषा में गुजराती एवं फारसी शब्दावली की बहुलता है। एक उदाहरण यहाँ ध्यातव्य होता है।

इस बस्ती का क्या पतियारा

सो क्यूँ तिस कूं धरे प्यारा,

ये जग बाँदी उस जग की रे,

जहाँ न निमटे खेल सबेरे,

जानूँ बात सही कर मेरी । 15

इनकी कविताओं में सूफियों के प्रेम की पीर स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। इन्होंने सदैव अपने आपको आशिक और जुदा के माशूक के रूप में देखा है। वे ईश्वर को सारे संसार में व्याप्त मानते है।

''मुझ बिन कोई नहीं जग माँहा। चेरी सुहागन हूँ तिस नांहाँ।

आपन खेले खिलावे। आपन आपस ले कल लावे । [16]''

परम तत्व की प्रप्ति के लिए प्रेम साधना का उपदेश दिया हैं-

मौलाना अब्दुल हक ने इनकी भाषा के सम्बन्ध में कहा है- **''इनका तर्जे, कलाम हिन्दी शौरा का सा है।''** [17] वैसे इन्होंने अपनी भाषा को सदैव 'गूजरी' कहा है।

हज़रत कुतुबे आलम :

पाटण निवासी प्रसिद्ध सूफी फकीर हज़रत कुतुबे आलम अहमदशाह के अहमदाबाद बसाने पर अहमदाबाद चले गए । इनका जन्म सन् 1388 में और मृत्यु सन्.1446 में हुई। **''मिराते अहमदी''** और **मिराते सिकंदरी** में इनकी वाणी संकलित है। एक उदाहरण दृष्टव्य है

कांधी का राजा तुम सर कोई न बूझे ।

सकी का राजा तुम सर कोई न बूझे [18]

अहमदाबाद के निकटवर्ती गाँव में इनका मज़ार है। इनकी मृत्यु के बाद इनके बड़े लड़के हजरत शाह आलम गद्दी के अधिकारी हुए । हजरत कुतबेआलम और उनके मुरीद शाहआलम हिन्दी में उपदेश दिया करते थे।

हज़रत सैयद-मोहम्मद जौनपुरी : (1443-1504 ई)

हज़रत सैयद महुम्मद जौनपुरी के जन्म के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त नहीं होती है। इनका ज़ीवन काल 1443-1504ई. तक माना जाता है। इन्होंने अपने जीवन का अधिकतर समय घूमने फिरने मे व्यतीत किया था। अपनी यात्रा के दौरान ये अहमदाबाद में भी रहै थे ये मेहदी संम्प्रदाय के माने जाते हैं। इन्हों ने भी गूजरी हिन्दी में काव्य रचना की है- इनकी रचना शैली का एक उदाहरण दृष्टव्य है-

''चंदर कहे तारायन कू, सूरत देखो आय।

ऐसा भागवन्ता जो भेटिया, दृष्ट पाप छुट जाए [19]

गूजरी हिन्दी में कुछ अल्फाज़ यहाँ दृष्टव्य है-

''हूं बलहारी सजना हूँ बलहार

हूं साजन सहरा साजन मुझ गलहार

तू रूप देख जग मोहया चंद तारायन भान ।

उन्हीं रूप पहल होऊँ, का वही न होंवे आन ।।''

इनकी मृत्यु 61 वर्ष की अवस्था में बलूचिस्तान में हुई ।

खूब मुहम्मद चिश्ती ''खूब'' (1539-1614ई)

अहमदाबाद निवासी सूफी कवि हजरत खूब मोहम्मद साहब चिश्ती का जन्म ई. 1539 में हुआ था। वे प्रसिद्ध सूफी संत थे । ये गुजराती के साथ साथ अरबी, फारसी भाषाओं के ज्ञाता थे। ये कांव्यकला के क्षेत्र में छंदशास्त्र एवं अलंकार शास्त्र में निपूण थे इसके साथ अन्य विषय जैसे की संगीत, ज्योतिष, आयुर्वेद, दर्शन, आदि में अच्छा ज्ञान प्राप्त किया था। **'खूब तरंग' 'छंद छंदा'** एवं **भाव-भेद** इनकी तीन प्रसिद्ध कृतियाँ है। खूब तरंग, 53 अध्यायोंवली आध्यात्मिक मसनवी हैं जिससे कुछ प्रसिध्ध प्रेरक कथाओं के माध्यम से प्रेम के महत्व को समझाया गाया है। इस मसनवी में आपने अपनी भाषा को अरबी फारसी आमेज गुजराती कहा हैः

जीवन दिल अजम अरब की बात ।

सुन बोले बोली गुजरात

जीवन मेरी बोली मुँह बात

अरब अजम एक संघात । [20]

भाषा को देखते हुए इस मसनवी को गुजरी हिन्दी कहना ही अधिक उचित प्रतीत होता है- कुछ उदाहरण दृष्टव्य है-

जौ हर अर्ज सो ज़र्रा जान ।

तल तल फिरे अजैमन आन ।

जिसको बहम करे नहीं दोवे ।

डाबा, जमना जिसे न होवे ।

इस प्रदेश के सूफी-संतों के चार प्रसिद्ध सम्प्रदायों में से चिश्ती सम्प्रदाय भी एक

है। खूब तरंग में 30 पंक्तियों में वर्णित एक प्रसंग का कुछ अंश इनकी रचनाशैली का परिचय देने के लिए यहाँ दिया जा रहा है-

एक सिकन्दर का था यार ।

पूछो उन्हें सो एकस बार।

तुम सब मश्रिक मगरिबि लेत ।

किस हिकमत जंग फतह केत ।

सिकन्दर ने तब दिया जवाब ।...

.... दिल मां आवे जेती बार ।

रहे खुदा सुं तेती बार ।।

यह जमइयत इसे संभाल।

हर ठांह रह हक सूं हर हाल॥

जे कहवे वह करुं सो काम।

पछी खुदा का होऊं तमाम॥

जान 'तफरका' इसीका नांव ।

हक बिसरे की है यह ठांव। [21]

शेख मोहम्मद अमीन

शेख मोहम्मद अमीन के जीवन विषयक अधिक जानकारी प्राप्त नहीं होती। थे औरंगजेब के अहद हिजरी सन् 1109 में वर्तमान थे। इनके द्वारा लिखी गई एक ''यूसुफ जुलेखा'' नामक इश्किया मसनवी में इन्होंने अपनी भाषा को गूजरी कहा है। इसके अतिरिक्त इन्होंने एक मसनवी और लिखी है जिसका नाम 'तवल्लुदनामा' है। बहुत से दक्कनी विद्वान मोहम्मद अमीन को दक्कनी मानते है, परंतु प्रो. डार साहब ने इन्हें गुजराती मानते हुए कहा है, **''मोहम्मद अमीन अपनी जबान को साफ–साफ गुजराती कहता है और बाज़ खालिस गुजराती अलफाज मसलन 'गाम' और 'पोपट' का इस्तेमाल करता है।** [22] इस संबंध में

अमीन का कथन द्रष्टव्य है-

सुनों मतलब अहे अब यूँ अमीं का।

लिखे गुजरी मने यूसुफ जुलेख ॥

हर एक जागे किस्सा है फारसी में ।

अभी उसकूँ ऊतारे गूजरी में ॥

के बूजे हर कुदाम इसकी हकीक़त ।

बड़ी है गुजरी जगबीच न्यामत ॥

बीता चालिस सो पर चौदह और सौ।

है लिखियाँ गोधरे के बीत सुनल्यो ॥ [23]

उपर्युक्त कथन के आधार पर कह सकते हैं, अपनी भाषाको गूजरी कहने का रिवाज तो दक्खिनी शायरों में भी था। किन्तु देशज प्रयोगों को देखकर और गोधरा वतन के उल्लेख के आधार पर कहा जा सकता है कि मोहम्मद अमीन गुजरात के होंगे या काफी समय तक गुजरात में रहे होंगे ।

मल्लिक अमीन कमाल (1620ई)

मल्लिक अमीन कलाम शाह आलम पीर के अनुयायी थे ।ये गुजरात के दरबारी शायर थे, कुछ लोग इन्हें दकनी भी मानते थे, इनके द्वारा लिखी गई किताब 'बहराम गोर' और 'हुश्नबानू' मसनवी प्रसिद्ध है।

"सुना शहर फारस का है बादशाह है। खूबी मने खूब ज्यों मेहो माह ।

कहते हैं बहुत खूबसूरत है वो। फिरंग चीन की खूब मूरत है वो॥

अगर्चे कही आदमी जाद है। चंदा उसके आगेसो बी मात है॥" [24]

सैयद शाह हाशिम :

सैयद शाह हाशिम भी अहमदाबाद के सूफी संत थे। इनकी मृत्यु सन् 1649 ई. में अहमदाबाद में हुई। आपकी वाणी हिन्दी में मिलती है-

''ये दुनिया के लोग कीड़े मकोड़े ।

गेहूँ शहद पर दौड़ते घोड़े

डूबते बहुत निकलते थोड़े ।'' [25]

मोहम्मद फताह :

गोधरा निवासी 'मोहम्मद फताह' भी शायर अमीन के समकालीन थे। इन्होंने 'युसुफ सानी' या 'जुलेखा-ए-सानी' लिखी है। जिसकी मूल प्रति बम्बई के प्रो. नदवी के संग्रह में सुरक्षित है। उनकी भाषा शैली का उदाहरण दृष्टव्य है-

''अब सुनो फताह की बातां, सब अयां ।

गोधरे के शहर में केतां बयां ॥

बैठे थे एक दिन जुम्मा मसजिद मने ।''

को बड़े और जगर सब छोटे नन्ने ॥

शहर सीं आया था एक मुहम्मद हया ।

उन निकाला यूसुफ जुलेखा तोतिया ॥ [26]

वली :

गूजरी की नई धारा के युग प्रवर्तक शायर 'वली' का पूरा नाम वली महुम्मद था। कुछ लोग इन्हें औरंगाबादी, कहते हैं और कुछ अहमदाबादी । धर्म और काव्य की 'तरस' लेकर ये सुरत, औरंगाबाद और दिल्ली आदि स्थानों का भ्रमण करते रहे तथा जीवन में इन्होंने ख्याति अर्जित की । सं. 1764 वि. में अहमदाबाद में इनकी मृत्यु हुई । [27]

हिन्दी और उर्दू की परम्परा में वली एक महत्वपूर्ण कड़ी है। वली के रेखता, गज़ल, कसीदे, मसनवी,रूबाई, तरजी और बंद आदि काव्यरूप उल्लेखनीय है। उत्तर भारत के कई फारसी कवियों द्वारा वली की आकर्षक और प्रभावपूर्ण शैली का अनुकरण किया गया।

दिल्ली के हातिम, फायज, पकरंग आदि अनेक समकालीन फारसी कवि इनसे प्रभावित हुए और देशीभाषा में कविता करने लगे । [28] डॉ. रामकुमार गुप्त के अनुसार ''**वली का महत्व इसलिए भी है कि उन्होंने दक्खिनी की स्वाभाविक धारा को उर्दू की सुसंस्कृत**

जबान में विलीन कर दिया इन्हीं की ज्योति से उत्तरी भारत में उर्दू के दीप जले और दक्खि नी के अनगिनत कवि पतिंगो की तरह उनकी ज्योति में अपनी सुधबुध खोकर सिंचते से चले गये । ''[29] वली की समर्थ शैली का उदाहरण देखिए -

''जिसे इश्क का तीर कारी लगे ।

उसे जिन्दगी क्यों न भारी लगे।

न होवे उसे जग में हरगिज करार।

जिसे इश्क की बेकारी लगे।

वली को कहे तूं अगर एक वचन

रकीबों के दिल में कटारी लगे ।'' [30]

वली के पश्चात यह धारा उर्दू और हिन्दी में बँट गई। इसके बावजूद हिन्दी काव्य परम्परा का प्रवाह नहीं रूका । गुजराती काव्य का सिलसिला 19वीं सदी के अंत तक चलता रहा। इस परम्परा का निर्वाह करने वाले कवियों में मिस्कीन, अब्दुला वाईज और शेख रहमतुल्ला विशेष उल्लेखनीय है। शेख दीन, पीर मशायख, मंजूर, गुलामी के द्वारा भी इसमें इज़ाफा होता रहा है।

गुजराती की संतकाव्य परम्परा के सूफी संतों के योगदान को विस्मृत नहीं किया जा सकता उ़न्होंने हि़न्दी और उर्दू के समन्वित प्रयोग किये हैं, तथा आध्यात्म एवं दर्शन में भी मुस्लिम एवं हिन्दु धर्म के उदाहरण समान दिखलाई देते है। गुजरात में हिन्दु मुस्लिम ऐक्य के स्वरों को सम्वर्धित करने के उन सूफी संतों, कवियों का प्रदान उल्लेखनीय रहा है।

प्रमाणी सम्प्रदाय और साहित्य प्रदान

स्वामी प्राणनाथ ने इस मत के प्रचार एवं प्रसार में गुजरात, मेवाड़ मारवाड़, मालवा होते हुए उत्तर भारतकी यात्राएँ की जहाँ उन्होंने दो संस्कृतियों के बीच होने वाले अमानवीय संघर्षो को देखा अतः साम्प्रदायिकता की इस विषम भावना को दूर करने के लिए भारतीय एवं विजातीय भावनाओं का ऐसा अपूर्व समन्वय किया जिसमें न वेषभूषा का प्रश्न था और न वर्ग संघर्ष का. सवाल था। कबीर ने मात्र हिन्दु-मुस्लिम एकता की ही बात कही, किन्तु प्राणनाथ ने तो कुरान, गीता, बाहुबल, एजिल तथा जेन्दोबास्ता की समानता दिखाकर लोगों को जिस एकात्मवाद का सन्देश दिया, उसीने आगे चलकर रामकृष्णमिशन, थियोसोफिकल सोसायटी जैसी संस्थाओं के प्रस्थापन में नींव का काम दिया ।

गुजरात में प्रणामी पंथ के प्रापः पचास से भी अधिक मन्दिर है। इन मंन्दिरो में मुरली, मुकुट और स्वामी प्रामनाथ विरचित श्रीमुखवाणी की पूजा होती है। इस पंथ की मुख्य गर्द्दियाँ पन्नाः बुन्देल खण्ड, नवतनपुरी, जामनगर और सूरत में है। स्वामी देवचंदजी के पश्चात जामनगर की गादी गृहस्थ गादी तथा सूरत की गादी फकीरी गादी कहालायी। गृहस्थ गादी के अधिकारी स्वामी देवचन्द्र के पुत्र बिहारीलाल थे, जबकि सूरत की फकीरी गादी

स्वामी प्राणनाथ से शुरु हुई। सूरत की फकीरी गादी की परम्परा इस प्रकार है।

श्यामदास महाराज

गोपालदास महाराज

मोहनदास महाराज

पीताम्बरदास महाराज

रंगीनदास महाराज

गोपालदास

महेराजदास

मंगलदास

प्रणामी सम्प्रदाय के प्रादुर्भाव से पूर्व हिन्दू धर्म विकट परिस्थितियों से गुजर राह था, उस समय विकसित धार्मिक सम्प्रदाय पारस्परिक विरोधों के कारण प्रकट हुए थे ।

प्राणनाथ पूर्व और उनके समकालीन पंथो में राधावल्लभी सतानी, महापुरुषिया, रामावत, वारकरी, नरसिंह सम्प्रदाय, रामदासी पंथ, रैदासी पंथ, परब्रह्म सम्प्रदाय, सतनामी, सत्यपंथ, महानुभाव पंथ, निरंजन मत बाउल सम्प्रदाय प्रमुख थे।

प्रणामी सम्प्रदाय का प्रादुर्भाव गुजरात की ज्ञानभक्तिपूर्ण भूमि में हुआ। इस सम्प्रदाय के मूल प्रवर्तक देवचन्द्र महेता है, किन्तु इसके प्रचार प्रसार का श्रेय प्राणनाथ को मिलता है। इस सम्प्रदाय को अन्य कई नामों से जाना जाता है, जैसे-निजानंद सम्प्रदाय खिजड़ा सम्प्रदाय [31] धामी पंथ, प्राणनाथी सम्प्रदाय [32] परनामी सम्प्रदाय [33] परिणामी सम्प्रदाय

[34] इस सम्प्रदाय के प्रमुख केन्द्र जामनगर (नौतपुरी) सूरत (मंगोलपुरी) और पन्ना (पदमावती पुरी) है। गुजरात में सामान्यतः पाटीदार, कायस्थ, बनिया, राजपूत, बढ़ई, दरजी, कोली इत्यादि जातियाँ में इस सम्प्रदाय का अधिक प्रचार है।

प्रणामी सम्प्रदाय के अनुयायी जब मिलते हैं तब एक दूसरे को हाथ जोड़कर 'प्रणामजी' कहते हैं। अन्य में परब्रह्म शक्ति दर्शन कर प्रणाम करने का यह बहुत उत्तम एवं सुन्दर शिष्टाचार है।

इस सम्प्रदाय की एक विशेषता यह है कि इस सम्प्रदाय के अंतरंग शिष्यों को सखी की उपाधि से विभूषित किया जाता है। क्योंकि यह सम्प्रदाय श्री कृष्ण के प्रति सखी या गोपी भाव से हार्दिक प्रेम निरूपण की आधार शिला पर अवस्थिर है। प्राणनाथ स्वयं 'इन्द्रावती' सखी है। दतिया के भक्त जुगलनाथजी को कमलावती की वासना मानते हैं। खेड़ा जिले के अलिंद्रा गाँव के लल्लु महाराज को इस सम्प्रदाय की लालसखी के रूप में पहचाना जाता है।

प्रणामी सम्प्रदाय के कवि और उनका साहित्य प्रदान

देवचन्द्र महेता (1582-1659)

''कुंवरबाई माताको नाम, उत्तम कायस्थ उमरकोट ग्राम। [35]

आय श्री देवचन्द्र जी नौतनपुरी, सुख सबों को देने देह धरी''

सम्प्रदाय 'माहेश्वरतंत्र' (सं. 40) के आधार पर मानता है कि ब्रह्मधाम में प्रभु ने ब्रह्म शक्तियों को आदेश रूप से सूचित किया था कि है ब्रह्मांगना, कदाचित मोह रूपी समुद्र में आप सभी निमग्न हो जाएँगी तो उस समय सुन्दरी नामक शक्ति (देवचन्द्र) साक्षात स्वरूप से आप सबंका उद्धार कर जागृत करेगी । यह परम तेज स्वरुपा सुन्दरी शक्ति मारवाड़ देश के उमर कोट नामक ग्राम में किसी पवित्र कुल में नर रूप धारण करेगी। चन्द्र नाम से अर्थात देवचन्द्र इस नाम से लोक में प्रसिद्ध हो सबकी अशुभ गति जन्म मरण रूप आवागमन को मिटा देगी। साथ ही अथर्ववेद (कांड 5, सूक्त 1, मं.3) के आधार पर यह भी माना गया है कि श्री देवचन्द्रजी अपने आत्मबल को उन सबों के लिए श्री प्राणनाथ जी के शरीर में जोड़ देंगे। इसलिए कि उनकी शुद्ध दीप्ति सुवर्ण के समान फैले । इस प्रकार स्पष्ट होता है कि सन् 1582 में राजस्थान के उमर कोट ग्राम में कायस्थ परिवार में गुरु देवचन्द्रजीने माता

कुंवरबाई और पिता मत्तू महेता के यहाँ जन्म लिया । बाल्यकाल से ही देवचन्द्रजी धार्मिक मोनोवृत्ति के थे ।[36] परिणाम स्वरूप राजस्थान छोड़ कर वे भुज होते हुए जामनगर में आए और वहाँ पर विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायों के कई साधु संतों के परिचय से उनके साथ देवचन्द्रजी का मेल जोड़ बढ़ा उन्होंने विष्णु सम्प्रदाय के महात्मा हरिदास का शिष्यत्व स्वीकार कर लिया, गुरु के यथानिर्देश 14 वर्ष श्रीमद्भागवत् के श्रवण अध्ययन में निरत रहने लगे परिणाम स्वरुप उन्हें श्री कृष्ण के दर्शन प्राप्त हुए । श्री कृष्णने उन्हें तारतम्य मंत्र दिया। ऐसी साम्प्रदाय मान्यता है।

श्री प्राणनाथ ने कहा है-

चौदे वषलो निष्ठाबंध, वचन ग्रेह सारी सनंध।

कई जप तप किये नेम, सेवा स्वरूप अति प्रेम ॥

श्री कृष्ण के प्रति श्रद्धा प्रेम निवेदन प्रेमलक्षणा भक्ति के माध्यम द्वारा किया गया इनका दार्शनिक सिद्धांत 'स्वलीलामृत ब्रह्म' है। इनकी शुद्ध भक्ति एवं पवित्र आचरण के फल स्वरुप लोग इनसे प्रभावित होकर अधिकाधिक लोग इनके सम्पर्क में आने लगे थे। फलतः इनके प्रति प्रेम, श्रद्धा एवं आदर प्रगट करने वाले नवीन वर्ग का निर्माण हुआ, इनके अनुयायी वर्ग में इनके बड़े बेटे बिहारीजी और सूरत निवासी प्राणनाथ अग्रगण्य थे।

गुरु देवचन्द्रजी द्वारा मूल तारतम्यवाणी लिखि गई। इनकी रचना सं.1678 [37] बाद की गई होगी। अपने अंतकाल में अपने शिष्य प्राणनाथ को तारतम्य मंत्र देकर शुक्ल, 14 बुधवार सं.1712 को उनका धमन गमन हुआ। [38]

प्राणनाथ : (1618-1675)

प्रणामी सम्प्रदाय का प्रादुर्भाव हुआ उससे पूर्व देश की विपरित् धार्मिक परिस्थिति के कारण हिन्दू धर्म पर संकट के बादल मंडरा रहे थे, ऐसी परिस्थिति में देवचन्द्र महेता द्वारा प्रणामी सम्प्रदाय का आविर्भाव हुआ। देवचन्द्र महेता की इहलीला संतरण के बाद इस सम्प्रदाय के प्रचार एवं प्रसार का कार्य इनके शिष्य प्राणनाथ ने बड़े भक्ति भाव से किया।

प्राणनाथ का जन्म सौराष्ट्र के हालार प्रदेश जामनगर में लोहाणा परिवार में सन् 1619 [39] में हुआ था। प्राणनाथ का समाज सुधारक एवं प्रतापी व्यक्तित्व था। उस समय

की धार्मिक परिस्थिति को देखकर विभिन्न धर्मो में एकता स्थापित करनेकी आवश्यकता को उन्होंने महसूस किया । विशेषकर, ईसाई, यहुदी इस्लाम व हिन्दू धर्म का गहरा अध्ययन कर इन धर्मो में अंतर्निहित समान भाव विचार के प्रति निर्देश किया ।

प्राणनाथ ने हिन्दु-मुसलमान जातियों के ग्रंथो का अध्ययन कर, अपने विचारों का आधार ढूँढ, कर दोनों जातियों के सामने मूलगत ऐक्य की घोषणा की-

''जो कुंछ कहया कतेबने, सोई कहया वेद ।

दोऊ बंदे एक साहब के, पर लड़त बिना पाये भदे''

-कवि उद्योगरत

इसके अतिरिक्त इन्होंने ईसाई, यहूदी पारसी, आदि धर्मो के पारस्पारिक वैमनस्क दूर कर अपने समयमें प्रचलित सभी धर्मो की मौलिक एकता सिद्ध की तथा सर्वधर्म समन्वय का स्तुत्य प्रयास किया ।

पूर्वाश्रम में मिहिराम, महेराम नाम से प्रचलित माने जाने वाले प्राणनाथ के संदर्भ में साम्प्रदायिक मान्यता के अनुसार ज्योतिषियोंने इनके जन्म के साथ भविष्यवाणी की थी, कि यह बालक ब्रह्मज्ञानी होगा और उसका भविष्य मिहिर सूर्य की भाँति भास्वर होगा।

जामनगर में प्रख्याति प्राप्त देवचंद्रजी के संपर्क में आने पर उन्हीं की भाँति कृष्णदर्शनजनित आनंद में अधिक समय मग्न रहने लगे । निज, स्व में गहरी अनुभूमि कर उसमें लीन रहने के कारण इनके गुरु के साथ साथ ये भी निजानंद स्वामी के रूप में पहचाने जाने लगे। अपने विचारों का प्रचार ये अपने गुरु की भाँति भागवत कथा एवं कीर्तन द्वारा करते थे। भागवत् के प्रति तीव्रउन्मुखता उठना उसका सांकेतात्मक वर्णन उनके शिष्य नवरंग स्वामीने इन पंक्तियों के माध्यम से किया है-

''छुटे सुख सबे संसारी जतन देहके सबे विसारी

खान पान भोज नहीं भाते ।

दिन रैन रोक्त ही जाते''

प्राणनाथ ने राजस्थान, बुन्देलखण्ड, दिल्ही, अरबस्तनि आदि विभिन्न शहेरों की

यात्रा करने के कारण ये विभिन्न भाषा के मर्मज्ञ बन गये। परिणाम स्वरूप इन्होंने विभिन्न भाषाओं में तथा सभी भाषाओं के समन्वय से हिन्दुस्तानी भाषा में कृतियों का निर्माण किया। इनके शब्दोंमें -

''सबको प्यारी अपनी, जो है कुल की भाख।

अब कहूँ भाषा में किनकी, यामें भाषा तो कै लाष ।

बोली जुदी सबन की और सबका जुदा चलन।

सब उरझे नाम जुदे घर, पर मेरे तो कहेना सबन

बिना हिसाबें बोलियाँ, मिने सकल जहान

सबको सुगम जानके कहूँगी हिन्दुस्तान''

प्राणनाथ की हिन्दुस्तानी को अमीर खुसरो की हिन्दवी का अनुरूप और गाँधीजी की हिन्दुस्तानी का पूर्व कहा जा सकता है।

प्राणनाथ ने हिन्दी हिन्दुस्तानी में विपुल सर्जन किया है। इनकी वाणी को दो विभागों में प्रस्तुत किया गया है। 1) होश वाणी 2) बेहेरवाणी । गुरु की प्रेरणा और विरह से उन्मत काव्य को शबाबी या बेहोशवाणी और साम्प्रदायिक उन्मेष के रूप में जो कहा गया है उसे होशवाणी कहते है।

''कुलजमस्वरूप'' उनके बेहोशवाणी का प्रतिनिधि ग्रंथ है। कुलजम स्वरुप का मूलनाम ''कुलजम-ए-शरीफ ''अर्थात मुक्ति की पवित्र धारा।'' कुलजम स्वरूप के मूल में हिन्दुओं और मुस्लिमों में से धार्मिक किल्विशता को दूर कर इन दोनों के बीच सौमनस्य स्थापित करने की उदात्त् भावना है।

प्राणनाथ सम्प्रदाय में इसे 'तारतम्यसागर' 'स्वरूप साहेब', श्रीमुखवाणी निजानंद सागर आदि नामों से जाना जाता है। इसमें प्रणामी सम्प्रदाय के उद्‌भव एवं विकास की कहानी है। साथ प्राणनाथजी प्रणीत अनेक गुजराती हिन्दी रचनाओं का संकल किया गया है-

इसमें प्राणनाथ जी के सबध, कीरतन, खुलासा, खिलवत,परकश्मा, सागर सिनगार,

सिन्धी, चौपाई, मारफत सागर, कयामत नामा, रास षटऋतु, प्रकाश आदि 14 ग्रंथो की लगभग 18000 चौपाईयाँ है। (जिनकी विस्तृत चर्चा हम आगे करेंगे)

इन रचनाओं में एक ब्रह्म की साधना के निरूपण के साथ तिलक-छापा-माला, नमाज-रोजा, हज आदि ब्रह्मचारों की भर्त्सना की है। इसके अतिरिक्त कतिपय संगीतात्मक पदों में राधा-कृष्ण की बाल एवं रासलीलाओं, होरी, फाग आदि प्रसंगो तथा आत्मा-परमात्मा के विरह-मिलन की रहस्यभावनाओं का भी रसात्मक वर्णन मिलता है।

प्राणनाथ ने हिन्दू और मुस्लिम धर्म ग्रंथों का गहन अध्ययन किया, और अपने विचारों का आधार ढूंढकर दोनों जातियों के बीच मूलगत एक्य की घोषणा की-

''जो कुछ कहया कतेबने, सोई कहया वेद।

दोऊ बंदे एक साहब के, पर लड़त बिना पाये भेद।''

इसलिए इनके अनुयायी वर्ग में उदारमतवादी हिन्दू और मुसलमान दोनों का समावेश एक साथ होता रहा।

प्राणनाथजी की मृत्यु के बारे में विद्वानों में मतभेद है। आ. परशुराम चतुर्वेदी, डॉ. नागर, पी. कृष्णमूर्ति अय्यर ने इनका धाम गमन सं. 1751 का माना है। डॉ. रामकुमार वर्मा ने सं. 1771 का उल्लेख किया है।

प्राणनाथ के प्रमुख शिष्यों में बुंदेलखण्ड के छत्रसाल महाराज और नेपाल के राजा रामबहादुर के अतिरिक्त केशवदास एवं लालदास मुख्य हैं। औरंगजेब से लड़कर हिन्दू धर्म की रक्षा करने में इन दो राजवीयों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

प्राणनाथ के शिष्यों में दो वर्ग दिखाई पड़ते है। एक वर्ग के शिष्य अनुयायी प्राणनाथजी की हिन्दू और मुस्लिम दोनों धर्मो के पवित्र ग्रंथों के एकतापरक विचार धारा पर विश्वास रखकर अपनी उदारमतवादीता का परिचायक है। तो दूसरा वर्ग श्री कृष्ण की प्रेमलक्षणा भक्ति में श्रद्धा रखनेवाला है।

प्रथम वर्ग में जीवन मस्तान (17में विद्यामान) धर्मदास, जुगुलदास, चतुरदास,चेतनदास का समावेश होता है। प्रणामी सम्प्रदाय में 'बीतक' की भी रचना हुई।

इस सम्प्रदाय की 'बीतक' परम्परा हिन्दी जीवनी साहित्य की विद्या में एक मौलिक देन के समान है।

नवरंग स्वामी

नवरंग स्वामी श्री कृष्ण की प्रेमलक्षणा भक्ति में श्रद्धा रखनेवाले दूसरे वर्ग के प्रतिनिधि है। इनका जन्म सन 1648 में सूरत में हुआ था। इनके पिता माधवजी और माता कुँवरबाई थे। इनका मूलनाम मुकुँद था, वे स्वामी प्राणनाथजी की हिन्दूशास्त्रपरक बनियो के विद्वान और पक्षकार थे। प्राणनाथ के व्यक्तित्व से प्रभावित होकर युवावस्था में ही उनके शिष्य बन गए थे. और गुरु के देहांत तक निरंतर उनकी सेवा में व्यस्त रहे थे। गुरु के देहांत पश्चात संप्रदाय के प्रचार प्रसार के लिए वे राजस्थान चले गए, वहाँ उदयपुर के राजाने उन्हें गुरू रूप में स्वीकार कर लिया इस प्रकार राजस्थान में प्रणामी सम्प्रदाय के प्रसार में नवरंगजी का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

नवरंग स्वामी द्वारा लिखे गए प्रमुख ग्रंथ 'बीतक' रससागर, और सुंदर सागर है। अन्य उल्लेखनीय ग्रंथ में 'षटशास्त्र' 'लीला प्रकाश', 'गीता-रहस्य', 'गुरु-शिष्य संवाद' और 'फुटकल पद' का समावेश होता है। नवरंगी स्वामी कृत 'बीतक' में नवरंग के प्रश्न और प्राणनाथ जी के उत्तर संगृहित है। इस प्रश्नोत्तर में क्षर, अक्षर और पूर्ण ब्रह्म तीनों का समावेश किया गया है। इनके गुरु शिष्य संवाद लेखन में मध्यकालीन साहित्य में संवादकाव्य लेखन की परम्परा का अनुसरण हुआ देखा जा सकता है। अखाने भी ऐसे संवाद काव्य लिखे हैं इस के अतिरिक्त रविदास, खीमदास की भी प्रश्नोत्तरी मिलती है रससागर में इनकी साधुर्योपासना का स्वरूप मिलता है। निम्नलिखित पद में कृष्ण के प्रति गोपी का प्रेम, विरह निवेदन दृष्टव्य है-

कब हम नैन मिलावसी चरण (तली) सिद्ध सार

दृष्ट शितल सुख उपजे, मरे आतम के आधार ॥

कब हम नखमणि निरखेंगे भूषण झलहल कार ।

चरण तले कब बसेंगे, मेरे आतम के आधार ॥

2. स्वामी लालदास

स्वामी लालदास लोहाणा जाति के कुलिन व्यापारी थे। स्वामी लालदास स्वामी प्राणनाथ के प्रमुख शिष्यों मे से एक थे। इनकी निम्नलिखित रचनाएँ मिलती है-

(1) बडी वृत्त 2) छोटी वृत्त (गद्य) (3) मोहमद साहब की बीतक यानी माजजा (4) बड़ा मसौदा (5) श्रीमद्‌भागवत् के टीका-अनुवाद (6) अन्यं छंद [40] इन सब में बीतक ही अधिक आदरणीय है 'बीतक' हिन्दवीं में लिखा हुआ प्राणनाथ का जीवन संबंधी ग्रंथ है। सन 1684 इ. सं.1741 में लिखा होने से यह हिन्दवी का प्रथम जीवन चरित्र कहा जा सकता है। [41]

3. महाराजा छत्राल

बुन्देलखण्ड के महाराज छत्रसाल ने स्वामी प्राणनाथ का शिष्यत्व प्राप्त किया था। प्राणनाथजी ने इनके सहकार से बुन्देलखण्ड एवं राजस्थान, दिल्ली, मसकद आदि अन्य शहरों की यात्रा कर इस सम्प्रदाय के प्रचार-प्रसार में महत्वपूर्ण योगदान दिया था। इनका रचनाकाल सं.1730 के आसपास माना जाता है।

'श्री कृष्ण कीर्तन,' 'श्री रामयश', 'चन्द्रिका', 'हनुमद', 'विनय', अक्षर अनन्यजूके पत्र और तिनकौ उत्तर, नीति मंजरी, स्फुट कविताएँ तथा 'राजविनोद गीतों का संग्रह', 'छत्रविलास', 'नीति मंजरी महाराज छत्रसालजू की' आदि काव्य कृतियाँ महाराज छत्रसाल जी की रचनाओं में उल्लेखनीय है। [42] एक स्थान पर उनके 'कृष्ण चरित्र नामक ग्रंथ का भी उल्लेख है।'[43]

4. ब्रज भूषण

ब्रजभूष स्वामी प्राणनाथ के प्रमुख शिष्य छत्रसाल के शिष्य थे। इनकी तीन रचनाएँ बताई जाती है-

1) वृतांत मुक्तावली (2) परात्पर दीपक (3) श्री प्राणना जी का जीवन चरित्र (संस्कृत) [44] इनका रचना काल वि. सं, 1755 का माना जा सकता है। [45] प्रणामी सम्प्रदाय की रसोपासना का स्वरुप और देवचन्द्र जी का नामोल्लेख इनके निम्नलिखित पद में मिलता

है।

निज शिक्षा गुरु और बताई,

सो देवचन्द्र चित सों लाई।

अपनी सखी भाव करि लीजै,

पुरुषभाव अपनो तजि दीजै।

श्री कृष्ण चन्द्र जानौ गुरु आपन,

श्यामा निज उपासना थापन ।

पुनि यह नाम मंत्र रस पीजै । [46]

5. बख्शी हंसराज

प्रणामी सम्प्रदाय के श्री कृष्ण के प्रति प्रेमलक्षण भक्ति-भाव रखने वाले वर्ग में बख्शी हंसराज का समावेश होता है। संम्प्रदाय में वे प्रेम सखी के नाम से प्रचलित थे। इनकी रचना अत्यंत प्रेम और माधुर्यता से भरपूर है। इनकी छह रचनाएँ है । [47]

1) मिहराज चरित्र (2) स्नेह सागर (3) श्री कृष्ण की पाती (4) श्री जुगुल स्वरूप विरह पत्रिका (5) फगवरंगिनी (6) चुरिहारिन लीला

6. लल्लु जी महाराज-लालसखी

लल्लुजी का जन्म सं.1890 में लगभग और मृत्यु सं.1954 में हुई थी, प्रणामी सम्प्रदाय के अनुयायियों में वे लालसखी के नाम से जाने जाते थे। लल्लुजी के देवचन्द्रजी और प्राणनाथ के जीवन की गुजराती में लिखि बीतक **'वर्तमान दीपक'** के अतिरिक्त **'जीवचेतवाणी'**, **'इश्वर बोध सागर'**, **'आत्मबोध और श्रृति विवाह'** अन्य ग्रंथ है। इन ग्रंथों के अतिरिक्त साम्प्रदायिक सिद्धांतों से पूर्ण और भक्तिपूर्ण भजन और गरबे भी उन्होंने लिखे है।

7. मुकुन्द स्वामी

मुकुन्द स्वामी स्वामी प्राणनाथ के समकालीन थे [48] इनकी रचनाओं में 'अर्थज्ञान

तिलक' अथ जागनी लीला वर्णन, परमधाम वर्णन, 'सुन्दर सागर' और 'बोध सागर है।' [49] इन्होंने माधुर्य भाव की भक्ति की है-

''तुम नन्दलाल ! सदा के कपटी। टेक।

मैं जमुना जल भरन जात रही, गगरी हमरी घाट पै पटकी।

मैं दाधि बैचन जात वृन्दावन, दधि मेरो खाय बाह मेरी वटकी।

साथकी संगी पार उतर गई, नैया हमरी बीच ही अटकी।

कहत ''मुकुन्द'' रूप लोभानी, हमरी सुरति मुरति बीच अटकी।'' [50]

8. जुगलदास

जुगलदासजी झाँसी की राणी लक्ष्मी बाई के गुरु थे। प्रणामी सम्प्रदाय में उनका नाम आदर और सम्मान से लिया जाता था।

इनके ग्रंथो में 'परमधाम की बड़ी वृत्ति', 'मन-मोहन रसानन्द सागर', 'छोटी और बडी पत्री तारतम की प्रणालिका', वैराट निरूपण, 'महाकारण' इत्यादि है। 'रामनंद सागर उनकी गद्य लिखित रचना है। चेतनदास, चतुर दास, जीवनदास आदि इनके शिष्यगण है।'

9. जीवन मस्तान

मिश्रबन्धु ने जीवन मस्ताना का रचनाकाल सं.1757 माना है। [51] इन्होंने एक परमात्मा को सहायक बताया है। तथा बाह्य उपकरणों को आडम्बर माना है-

''कोई माला ले बैठे कोई अंग परवारे पानी से।

कोई आग जला आसिन पर बैठे, कोई लिए वेश भवानी से [52]

जीवन मस्तानने हिन्दू मुस्लिम एकता बर बल देते हुए गया है-''

1) ''पाप पुन्य को करती दुनियो यादीसे उरझानी है

हिन्दु मुसलमां दोउ फिरके अपनी अपनी बानी है।

मुसलमान बेचुन बतावें यों निराकर रहे ज्ञानी है

जीवन मस्तान साथ कहे थे सतगुरु से हम जानी है।''

2) "हिन्दु अनपी हुए न जाने मुस्लिम सरियत सारे की

पण्डित काजी बोल गुमागुम भलो बांग विचारे की

रहमत लिलिलह सबसे न्यारा यों निराकार कहै ज्ञानी की।

जीवन मस्तान कहै पुकारे अक्षर ब्रह्म के पारे की। [53]"

प्रणामी सम्प्रदाय के अन्य संतों में केशव दास, पंचमसिंह भट्टाचार्य जी, भीम भाई, लच्छीदास, महन्त श्री जीवराम, विहारीदास, जीवनदास गोपालदास महन्त, परमहंस गोपालदास, आनन्ददास, छज्जूदास, रतनदास, भवानी भाई, पिताम्बरदास आदि का नामोल्लेख मिलता है।

प्रणामी सम्प्रदाय की प्रमुख रचनाएँ :

प्रणामी सम्प्रदाय के संस्थापक प्राणनाथजी से पूर्व इस सम्प्रदाय का कोई साहित्य प्राप्त नहीं होता इस विषय में प्रामाणिक सामग्री का अभाव है। इतना स्पष्ट रूप से कहा जाता है कि प्रणामी सम्प्रदायको निश्चित स्वरूप देने में स्वामी प्राणनाथजी के द्वारा लिखित साहित्य का विशिष्ट योगदान रहा है।

मूल तारताम्यवाणी :

यह रचना प्राणनाथ के गुरू देवचन्द्रजी द्वारा लिखि गई है। इस रचना के रचनाकार के विषय में अनेक आशंकाएँ व्यक्त की गई है। सं. 1980 में सम्प्रदाय के एक पक्ष की पत्रिकाओं से [54] यह शंका उठायी गयी है कि देवचन्द्रजी (सुन्दरबाई) का नाम काटकर प्राणनाथ ने अपना नाम रख दिया है। लेकिन इस बात से सम्प्रदाय के विद्वान सहमत नहीं है। वे इतना अवश्य स्वीकार करते है [55] कि देवचन्द्रजी का "मूल तारतम्य का होना स्वाभाविक है क्योंकि उन्हीं के उपदेशों का विस्तार प्राणनाथ ने 'कुलजमस्वरूप'में किया है। मूल तारतम्य के विषय में कहा जाता है कि गुरु देवचन्द्र जी के श्री कृष्णदर्शन का वर्णन ही मूल तारतम में हुआ है । इस सम्प्रदाय में एक मान्यता यह व्याप्त है कि अश्विन कृष्ण चतुर्दशी सं.1678 के दिन उनको जामनगर के श्यामसुन्दर जी के मंदिर में ऐसा प्रतीत हुआ कि एक महान अद्भूत तेजपुंज्ज उनके सामने उपस्थित है। कृष्ण के मूल स्वरूप ने इस प्रकार दर्शन दिये और बाद में कृष्ण-देवचन्द्रजी के बीच ब्रह्म आदि के बारे में चर्चा हुई। अर्थात् तारतम

की मूलवाणी सं. 1678 के बाद ही कभी लिखी गई होगी ।

प्राणनाथजी की रचनाएँ :

प्राणनाथजी की होशवाणी (बेहोशवाणी) जोशवाणी

रास : ब्रज और रास की लीलाओं का वर्णन कर पूर्व स्मृति की जागृति एवं जगत के मोह-अज्ञान में विस्मृति आत्मस्वरूप का ज्ञान कराना ही रास का मुख्य लक्ष्य है। इस रचना का आरम्भ ''हवे पहेलाँ मोहजलनी कहूं बात'' से होता है। यह मोहजल ही माया है जो चारों ओर व्याप्त है। देवी देवता भी इसके प्रभाव से बच नहीं सके अतः प्रभुकी शरण में जाना ही श्रेयस्क है।

''**प्रकाश**''(गुजराती) इसके अन्तर्गत ब्रज और रासलीला के रहस्यों पर प्रकाश डाला गया है और साम्प्रदायिक दर्शन के अनुसार तामस प्रकृतिमय ब्रह्मांडनाओं की इच्छापूर्ति हेतु ब्रह्मलीला इस ब्रह्माण्ड में अवतरित हुई है, उनमें एक सूत्रता स्थापित करने का प्रयत्न कियागया है। इस रचना का मुख्य भाव सांसारिक माया के आवरण से ढँकी हुई आत्माओं को आत्मजागृति का ज्ञान देना है। आत्मज्ञान करना ही इस ग्रंथ का मुख्य उदेश्य है। [56]

''**षटऋतु**'' इस रचना में अपने परम प्रभु से बिछड़ी हुई आत्मा ऋतु-ऋतु में अनुभूत पूर्व सुखों की सुखद स्मृति के द्वारा उद्दीपित हो जाती है और प्रियतम के विरह की अग्नि में अवगुणों को जलाकर निर्मल शुद्ध हृदय से यही कहती है कि, हे प्रिय, अखंण्ड परमधाम में तो तुम्हारे मधुर मिलनके आनंद का सदा अनुभव किया लेकिन इस मायापूर्ण जगत में वैसा मिलन दुर्लभ है। अतः दर्शन देकर आप मेरी विरहाग्नि को शांत करो । [57]

''**कलश**'' : यह रचना मूल गुजराती में है और गुजराती में लिखित उसी रचना का अनुवाद यह है। इस रचनामें ब्रह्मांड वर्णन, प्रेममार्गप, माया का स्वरूप, विशिष्ट आत्माएँ गोकुल लीला, जागनी लीला का इसमें भी वर्णन किया गया है। इन्होंने यही उपदेश किया है कि [58] माया दुखदायी हैः

लगोगे जो दुख को तो दुःख तुमको लागसी ।

याद करो निज सुख, तो दुख पीछे भागसी ॥

इसे प्राप्त करने का प्रयत्न करोगे तो दुःख ही पाओगे। उससे बचने का एकम मात्र यही उपाय है कि अपने परमधाम के अखंड सुखों का स्मरण करो। दुःख स्वयंही मिट जाएँगे।

'सनंघ' इस रचना के अंतर्गत स्वामी प्राणनाथ ने श्रीमद्भागवत् के माध्यम से इस्लाम के धर्मग्रन्थ ''कुरान'' की नवीन यवख्या की है। कुरान के कई प्रकरणों (सूरा) की भागवत, उपनिषद् आदि के तत्वों के साथ तुलना करके यही सिद्ध करने का प्रयत्न किया है कि सभी धर्मो का मूलतत्व एक ही है, लेकिन भिन्न भिन्न भाषा के कारण झगड़े पैदा होते है-

हकीकत फुरमानकी, कहूँ सुनो सब मिल।

नूर अकल आगे ल्याएके,साफ करू तुम दिल॥

अब सो आखर आइया, उठ खड़े रहो मुस्लिम ॥

पाक करू नूर अकलें, खबर देऊ खसम॥

सबको प्यारी अपनी, जो है कुलकी भाख।

अब कहूं भाषा मैं किनकी, यामें भाषा तो कैलाष॥

बोली जुदी सबनकी, और सबका जुदा चलन।

सब उरझे नाम जुदे घर पर मेरे तो कहेना सबन॥

बिना हिसाबें बोलियां, मिने सकल जहान।

सबको सुगम जानके, कहूंगी हिंदुस्तान ॥ [59]

इस रचना में यह भी स्पष्ट होता है कि उन्होंने अपने आपको ''कुरान'' द्वारा सप्रमाण ''इमाम महेंदी'' और शास्त्रों के अनुसार ''विजयाभिनंदन निष्कलंक बुद्ध'' भी घोषित किया। पं. मिश्रीलाल शास्त्री के अनुसार [60] प्रस्तुत ग्रंथ तत्कालीन धार्मिकनीति का एक ज्वलन्त प्रतीक है।

''कीर्तन'' वेदान्त और पुराणों से सम्बन्धित ''कीर्तन'' अधिक प्रभावशाली है। इसमें नाना राग-रागिनियों में छोटे बड़ें कई कीर्तन हैं। इन कीर्तनों का उपदेश सर्वदेशीय एवं सार्वजनिक है। ''सनंघ में सच्चे मुस्लिम की पहचान थी और ''कीर्तन''में सच्चे मनुष्य की पहचान वे क़राते हैं। [61]

''**खुलासा**'' इस रचना में स्वामी प्राणनाथ ने कुरान जिसको वे खुदा का फरमान मानते हैं, उसका स्पष्ट रूप प्रगट करते हुए संसार में धार्मिक वैमनस्य को दूर करने का प्रयत्न किया है। स्वामी प्राणनाथ की समन्वयवादी विचारों की इसमें स्पष्ट अभिव्यक्ति हुई है। जो कुछ वैदिक ग्रंथो में कहा गया है, वही अवैदिक ग्रन्थों में भी है-

जो कुछ कहया कतेबने, सोई कहया वेद।

दोऊ बंदे एक साहेब के, पर लडत बिना पाये भेद ॥

बोली सबों जुदा परी, नाम जुदे परे सबन।

चलन जुदा कर दिया, ताथें समझ न परी किन॥

ताथें भई बड़ी उरझन, सो सुरजाउ दोउ ।

नाम निशान जाहेर करुं, जो समझे सब कोऊ ॥ [62]

''**खिलवत**'' इस रचना में प्रेमी-प्रियतम-संवाद है। अहंभाव का दमन, ब्रह्मज्ञान की महिमा, ब्रह्मसृष्टि का सृष्टि में अवतीर्ण होने का कारण, आदि बातों का इसमें समावेश किया हैं। परमधाम के दर्शनकी आंतरकि चाह अभिव्यक्त हुई हैं। परमधाम की कल्पना करते हुए वे कहते हैं कि वहाँ तो ज्ञान के सागर हैं। स्वयं साकी शराब उंड़ेले जा रहे हैं, अपने प्याले ले लेकर भरने जाइए।

''**परकरमा**'' (परिक्रमा) इस रचना के अंतर्गत कवि ने आत्मा के परमधाम में विचरण का संसारिक शब्दों में वर्णन किया है। बुद्धि, जोश, बल या ज्ञान वहाँ नहीं पहुँच सकते क्योंकि वह प्रेम-भूमिका है। इसलिए वे प्रेम को परमधाम की सैर करवा देने की बिनती करते हैं।

''**सागर**'' इस रचनामें ''परकरम'' में बतायें गऐ आठों सागर का ही विस्तार से वर्णन है। किन्तु सागरों के रूप में पूर्णब्रह्म सच्चिदानंद के अप्राकृत गुण और उनकी असीमता का वर्णन करते हुए अलौकिक दिव्यता की ही अभिव्यक्ति हुई है। पूर्ण पुरषोत्तम युगल स्वरूप का दिव्य श्रृंगार का और ब्रह्मागनाओं के श्रृंगार का चित्रण किया गया है।

इस प्रकार इस रचनामें आठों सागर के गूढ़ार्थ का विवेचन हुआ है।

''**सिनगार**'' (श्रृंगार) रचनामें आत्मा के समक्ष सच्चिदानंद परब्रह्म सखि शिखान्त श्रृंगार और अंग उपांगों का पृथक-पृथक सौंदर्य, वस्त्रालंकारों की दिव्यता का विभिन्न रूपों में, प्रेम-प्रीत, कृपा-कोमलता, कला-कौशल्य, नीति, बलविद्वता और अपूर्वता का वर्णन किया है।

''**सिन्धी**'' इस रनचा में प्रभु से बिछुडी आत्मा जब प्रयत्न करने पर भी प्रभु से मिल नहीं पाती, तब निराश होकर बैठ नहीं जाती। लेकिन प्रभु को सहायता के लिए पुकारती है, उनकी शक्ति और आज्ञा को चुनौती देती है। इतना तक कह डालती है कि मेरे प्रेम की कमी नहीं, आपके हुक्म की ही देर है, वरना मैं कब से जागृत हो चुकी होती। खेल का ब्योरा, बिनती, न्याय, फरियाद और हमारा अपराध इन चार मुख्य बातों को लेकर इसकी रचना की गई है।

''**मारफतसागर**'' इस रचना में सरियत के बन्धनों में जकड़े हुए ''कुरान'' के धार्मिक सिद्धान्तों का आध्यात्मिक विश्लेषण किया गया है। मारफत आत्मा का मुक्तावस्था का नाम है। ''कुरान'' में आखिरी जमाने के सूचक सात निशानों का उल्लेख आया है, जो मशरके और मगरब सूरज, आजूजमाजूज, दाफ तुल अर्ज, दजाल नाम से हैं। उन्हीं सात तत्वों का वैदिक ग्रन्थों में वर्णित अंतिम युग के प्रसंगो से संगति कर, धर्म की विभिन्नता के समन्वय की उच्च भावना उत्पन्न करना ही इस रचना का प्रधान उदेश्य है।

प्राणनाथ ने कहा है, जब से ब्रह्मांड बना है परमात्मा के अंश से उत्पन्न अवतार-पैगम्बर ब्रह्मज्ञान को संकेतों में बताते रहे ।

प्रणामी सम्प्रदाय में स्वामी प्राणनाथ के अतिरिक्त उनके अन्य शिष्यों एवं अनुययियों द्वारा लिखि गई रचनाएँ प्राप्त होती है। इन सभी की रनचाओं का मुख्य विषय गुरु देवचन्द्रजी, स्वामी प्राणनाथ के जीवन, कार्य या विचारों तथा कृष्ण-राधा के प्रति उत्पन्न भक्ति-भाव की अभिव्यक्ति ही रहा है।

प्रणामी सम्प्रदाय की ''बीतक'' परम्परा हिन्दी जीवनी साहित्य की विधा में एक मौलिक देन के समान है। साम्प्रदायिक साहित्य में इन बीतको का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। डॉ. भोलानाथ तिवारी के मतानुसार जीवनी के लिए ख्यात एक शब्द ''बीतक'' भी है।

''बीतक'' शब्द संस्कृत. ''वृत्त'' से बना ज्ञात होता है और सन्त साहित्य में जीवन वृत्त के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। प्रणामी साहित्य में इस अर्थ में इसका प्रयोग हुआ है। प्रणामी सम्प्रदाय के प्रवर्तक प्राणनाथ के तथा उनके तथा उनके गुरु देवचन्द्र के जीवन को लेकर प्रणामी साहित्य में लालदास ब्रजभूषण, हंसराज मुकुन्द या नौरंग स्वामी सनेह सखी की बीतक, लल्लू महाराज करुणावती की बीतक सात बीतकें लिखी गई है।

स्वामी लालदास की रचनाएँ

इनके नाम से सम्प्रदाय में सात रचनाओं का उल्लेख होता है। (1) बड़ी वृत्त पद्य (2) छोटीवृत्त (3) मोहमदसाहब की बीतक अर्थात भाजजा (4) बड़ा मसौदा (गद्य) (5) श्रीमद्भागवत् की टीका-अनुवाद (6) अन्य छंदों [63] छोटी वृत्त और बड़ी वृत्त में उन्होंने परमधाम का वर्णन किया है। माजजा और बड़ा मसौदा रचनाओं में कुरान के रहस्यों का आयतों औंर हदीसों के आधार पर विवेचन किया है। इन सभी रचनाओं में ''बीतक'' अधिक आदरणीय है। लालदास की यह रचना 'बीतक' प्रणामी सम्प्रदाय के सभी मंदिरों में हस्तालिखित प्रति के रुप में प्राप्त होती है।

इस बीतक के अंतर्गत तीनों स्वरुपों कृष्ण मुहम्मद, गुरु देवचन्द्र और प्राणनाथ की बीतक माना जाता है। इस संपूर्ण बीतक का विषय गुरु देवचन्द्र तथा स्वामी प्राणनाथ के संपूर्ण जीवन चरि़त्र उनके कार्य आदि की चर्चा की गई है। इस प्रकार बीतक में 71 प्रकरण और 4300 चौपाइयाँ है। प्रो.माताबादल जयसवाल ने स्वामी लालदास का उल्लेख करते हुए कहा है कि [64] ''बीतक'' हिन्दवी में लिखा हुआ प्राणनाथ का जीवन-चरित्र सम्बन्धी ग्रंथ है। संवत 1684 इ (सं.1741) में लिखित होने के कारण यह हिन्दवी का प्रथम जीवन-चरित्र कहा जा सकता है।

नवरंग स्वामी की रचनाएँ

डॉ. रामकुमार गुप्त इनकी रचनाओं के संदर्भ में कहते हैं कि इनके 167 ग्रंथ बताये जाते हैं। इनका सबसे प्रसिद्ध एवं विशाल ग्रंथ ''**नवरंग सागर**'' है। इनके द्वारा लिख गई **ग्रंथ-मिहिराज चरित्र, सुन्दर सागर, षट्शास्त्र, लीला प्रकाश, गीतरहस्य, गुरुशिष्य संवाद, फुटकल पद** [65] है।

सम्प्रदाय में इनके तीन ग्रंथों को आदरपूर्ण स्थान प्राप्त है 1 **बीतक, 2-रससागर** 3. **'सुन्दर सागर'** साम्प्रदायिक सिद्धान्तों की समीक्षा करती हुई रचना ''गुरु शिष्य संवाद'' भी प्रसिद्ध है।

''बीतक'' में श्री कृष्ण गुरू देवचन्द्रजी और प्रमाणनथजी का चरित्र किया गया है।

''गुरू-शिष्य संवाद'' में नवरंगजी के प्रश्न और स्वामी प्राणनाथजी के उत्तरों का समावेश हुआ है।

''रस सागर'' में उनकी माधुर्योपासना का स्वरूप ही झलकता है।

ब्रजभूषण की रचनाएँ

इनके द्वारा रचित तीन रचनाएँ बतायी जाती हैं- 1. ''बृतान्त मुक्तावली'', 2.''परात्पर दीपक''(गद्य) 3. ''श्री प्राणनाथजी का जीवन चरित्र'' संस्कृत में [66]

बृतान्त मुक्तावली के प्रारंभ में 35 प्रकरणों तक गुरू देवचंद्रजी का वर्णन है, 36 वें प्रकरण से 65 प्रकरण तक स्वामी प्राणनाथ का जीवन चरित्र और 80 प्रकरण तक पन्ना, छत्रसाल एवम् सांप्रदायिक तत्वों की चर्चा की गई है।

ब्रजभाषा में इनकी थोड़ी-सी रचनाएँ सिद्धांत सबंधी प्राप्त होती हैं। [67]

उपर्युक्त कवियों के अतिरिक्त श्री बख्शी हंसराज की **''श्री हिमराज चरित्र''** लल्लुजी महाराज की रचनाओं में बीतक गुजराती रचना **''जीवण चेतवणी''**, **''इश्वरबोध सागर'', आत्म बोध, श्रृति विवाह-**

महराज छत्रसाल की रचनाओं में **''श्री कृष्णकीर्तन''**, **''श्री रामायण चन्द्रिका''**, **हनुमंत विनय ''अक्षर अनन्यजू के पत्र और तिनकौ उत्तर''**, **''नीति मंजरी''**, **''स्फुट**

कविताएँ'', ''राजविनोद गीतों का संग्रह'', ''छत्र-विलास'', पंचमसिंह की ''सवैया रचना''

भट्टाचार्य जी की **''निगमार्थ प्रदीप'' ''विद्वद्दमनी''** [68] मुकुन्द स्वामी की **''साखी'', ''अथज्ञानतिलक'' ''अथ जागनी लीला वर्णन''** [69] **''परमधाम वर्णन''** [70]

''सुन्दर सागर'' [71] तथा **''बोध सागर''** [72]

जुगलदास की-गद्य रचना **''रसानन्द सागर''** तथा **''परमधाम की बड़ी वृत्ति'', ''मनमोहन रसानन्द सागर'', ''वैराट निरूपण'' आदि रचनाएँ**

महेत गोपलदास की **''प्रदेशी समाचार'' ''कवितावली''** रचनाएँ आदि अनेक कविओं की असंख्य रचनाएँ प्राप्त होती है। विषय की मर्यादाके कारण यहाँ पर कीन्हीं रचनाओं का मात्र नामोल्लेख ही दिया गया है।

उपर्युक्त तमाम रचनाओं के परिचय से यह स्पष्ट होता है कि प्रणामी सम्प्रदाय के संतों, कवियों की हिन्दी साहित्य के विस्तार में महत्वपूर्ण भूमिका रही हैं

रामानन्द सम्प्रदाय :

रामानन्द, वैष्णव धर्म को सबसे अधिक एवं व्यवस्थित विकसित तथा प्रसारित करने वाले श्री रामानुज के शिष्य थे। रामानन्द ने विष्णु के राम के लोक कल्याणकारी तथा लोक-रक्षक रूप को अपना आलम्बन बनाकर एक अलग सम्प्रदाय स्थापित किया तथा रामभक्ति का प्रसार किया। इस प्रकार स्वामी रामानन्द ने ''रामानंद सम्प्रदाय'' का प्रवर्तन किया। यह सम्प्रदाय ''श्री सम्प्रदाय'', ''रामानंद सम्प्रदाय'' और ''रामावत सम्प्रदाय'' के नाम से प्रसिद्ध है। कुछ लोगों के अनुसार ये तीनों भिन्न सम्प्रदाय है-इन सम्प्रदायों के कुछ अनुयायी अवधूत कहलाते हैं और कुछ को वैरागी कहा जाता है। इन दोनों साधु सम्प्रदायो में वेशभूषा और मान्यता आदि सम्बन्धी अन्तर भी है। [73] स्वामी रामानंद सं. 1356, 1526 [74] वस्तुतः युग प्रवर्तक आचार्य थे जिन्होंने अपनी विचारधारा से समस्त मध्यकालीन भक्तिधारा को प्रभावित किया था । [75] निर्गुण काव्यधारा को प्रस्फुटित करने वाले जयदेव, नामदेव त्रिलोचन आदि में रामानन्द का स्थान सर्वोपरी है। रामानन्द के बारह शिष्यों में से अधिकांश की विचारधारा की जो नींव स्वामी रामानंद ने डाली उस पर विशाल एवं मजबूत भवन बनाने का

कार्य उन्हीं के शिष्य कबीर ने किया। इस विषय के सम्बन्ध में एक किवदन्ती भी प्रसिद्ध है -

"भक्ति द्रविड उपजी लाये रामानन्द

परगट किया कबीर ने सप्तदीप नवखण्ड"

रामानन्द ने दक्षिण भारत से उत्तर भारत में भक्ति का प्रसार किया । सच तो यह है कि चौदहवीं तथा पंद्रहवीं शती का समस्त उत्तरी सन्त परम्परा जहाँ रामान्द से प्रभावित है उसी परम्परा की एक अक्षुण्ण धारा गुजरात की ओर प्रवाहित होती हुई दिखाई देती है। इस सम्बन्ध में डॉ.के.एन.मुन्शीका कथन उचित ही है-

Ramanad's influence in Gujarat was widespred in the laller half of the fourteenth and the fifteenth century It taught the learned Not to sparn the lowly and the literate but to work with and for them throught the mediam of their own languages [76]

स्वामी रामानन्द ने गुजरात में द्वारका, सिद्धपुर, गिरनार आदि स्थानों पर अनेक यात्राएँ की थी। उनके शिष्य कबीर, पीपा आदि ने गुजरात के कोने-कोने में राम भक्ति का प्रचार किया.। चौदहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध्द और पंद्रहवीं शताब्दी में उत्तरी संत-काव्यधारा को सर्वाधिक प्रभावित करने वाले रामानन्द का प्रभाव तथा भक्ति-पद्धति का प्रचार गुजरात में 16वीं शताब्दी में भी हुआ। कहा जाता है कि रामान्द ने गुजरात के जूनागढ की गिरनार पहाड़ियों पर कई वर्षों तक रहकर योग-साधना की थी। आबू और जूनागढ की पहाडियों पर स्वामी रामानन्द के चरण चिन्ह् मिलते हैं। [77] स्वामी रामानन्द की दिग्विजय यात्रा में गुजरात का विशिष्ट उल्लेख मिलता है। [78]

रामानन्द तथा उनके बारह शिष्यों ने राम-नाम की उपासना करते हुए वर्ण-भेद का खण्डन किया। इन्होंने स्वयं वैष्णव आचार्य होते हुए भी कबीर, रैदास, धन्ना, पीपा आदि शूद्र

भक्तों को 'अपना शिष्य' बनाया [79] तथा ऊँच-नीच के भेद-भाव का निराकरण किया। सौराष्ट्र में इस पंथ की अधिक प्रचार होने से प्रत्येक गाँव में रामान्दी मन्दिर मिलते है। समाज की निन्म जातियों-पाटीदार, लुहार, बढ़ई आदि में इस पंथ की अधिक प्रचार हुआ है।

गुजरात के मध्यकालीन हिन्दी-साहित्य पर भी स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है। भालण की रनचाओं में तथा छोटम, प्रीतम, भोजा भगत, कुबेरदास आदि ज्ञानमार्गी-काव्यधारा के संतों की रचनाओं में इसका स्पष्ट प्रभाव दृष्टिगोचर होता है।

रामानन्द (मृत्यु 1457 इ0) [80] ने वैष्णव धर्म के प्रसार में क्रांतदर्शी भूमिका निभाई तथा पारंपरिक जाति-पाँति और ऊँच-नीच की व्यवस्था से पूर्णतः अलग होकर मानवतावादी भूमि पर अपने मतों सिद्धांतों और उपदेशों का प्रसार किया।

रामानन्द सम्प्रदाय के प्रदान के विस्तृत अध्ययन में डॉ. बडथ्वाल के हिन्दी काव्य में निर्गुण सम्प्रदाय, डॉ. बदरीनारायण श्रीवास्तव, आचार्य परशुराम चतुर्वेदी के ग्रंथ 'रामानन्द सम्प्रदाय तथा हिन्दी साहित्य पर उसका प्रभाव,' डॉ. रमणलाल प्रजापति का शोध प्रबंध ''गुजरात में रामानन्द समप्रदाय के कवि और उनका कृतित्व'' आदि उल्लेखनीय है।

कबीर पंथ का गुजरात में अविर्भाव

गुजरात में मुस्लिम प्रचारकों का आगमन 7वीं या आठवीं शती से प्रारम्भ हो गया था। वे भरूच, खंभात, सिंध एवं सौराष्ट्र के बंदरो से आकर गुजरात में ठहरने लगे थे। ग्यारहवीं शताब्दी के पश्चात गुजरात में चमत्कारी के प्रभाव से उन्होंने सामूहिक धर्म परिवर्तन कराना प्रारम्भ किया था। सूफियों को द्दष्टिकोण, समवयात्मक या भारतीय वेदान्त से वे प्रभावित थे। उनका अद्वैतमूलक सर्वात्मवाद भारतीय दर्शन की देन थी। हिन्दुओं के प्रति उनमें सहज सहानुभूति थी।

गुजरात में कबीर साहब के आगमन के समय हिन्दू-समाज की आंतरिक दशा अत्यंत दयनीय हो गई थी। मुस्लिम शासन ने उनके अधिकार ले लिये थे, तथा उनके उपर विशेष कर तथा कानून लगाये थे। सूरत में तो परिस्थिति इतनी विकट थी कि हिन्दुओं को मोहर्रम का ताजिया उठाना पड़ता था, विवाह कर देना पड़ता था तथा कब गाड़नी पड़ती थी। हिन्दूदेवस्थानों का विध्वंस हो रहा था। मूर्तियाँ तोड़ी गई थी। इससे हिन्दुओं की श्रद्धा

हिलगई थी। उनकी सगुण मूर्ति भावना को एक प्रबल ठेस लगी थी ।

फकीरा को आदर मिले, साधु आने न पाय।

दो बंदे साहिब के कैसे रखो दाय

लग्न–बेरो हिन्दवा लगे, मुक्त रहे मोमीन

घोर खुदे अरु ताज़िया हिन्दवा उठावत दीन

ध्यात तेरे राज में, वहुरि दिखे अन्याय । **– दुलाराम**

हिन्दुओं की आंतरिक स्थिति अत्याधिक खोखली हो गई थी। धर्म के नाम पर बाह्याचार तथा कर्मकांड रह गये थे। दम्भ एवं पाखण्ड का प्रभाव इतना विस्तृत था कि सत्यनिष्ठा भी पांखण्ड मानी जाती ।

महा सवारथ लोग भक्ति लौ लेस न जाने

माला–मुद्रा देखी, तासु की निंदा ठाने

(भक्तमाला छप्पन–108)

स्थान स्थान पर हठयोग के चमत्कारिक प्रयोगों से चन्दा वसूल किया जाता था। क्रियाकान्ड तथा उपासना का अधिकार उच्च कहलानेवाली जातियों तक सीमित रह गया था। निम्न जाति के लोगों को उनके ही हिन्दू भाईकी अवहेलना झेलनी पड़ती थी इसका प्रत्याघात यह हुआ कि हिन्दू धर्म या उनके ग्रंथों को इन लोगों के मन में कोई ममता रह नहीं गई । हिन्दुओं में शैव तथा वैष्णव एवं शैव तथा शाक्त के मध्य प्रबल संघर्ष चलता था। वस्तुतः ज्ञानीजी की प्राप्त जीवनी से ऐसे उल्लेख मिलते हैं कि स्वामी रामानन्द ने इन झगड़ो को मिटाने के लिये ही कबीर को गुजरात यात्रां की आज्ञा दी थी।

पुराने धर्म निः सत्व होते जा रहे थे। उनके उपर अनैतिकता ने आक्रमण कर दिया। गुजरात में शैव धर्म में कापालिकों का, शाक्त धर्म में वामनपंथियों का वैष्णव धर्म में गुरुओं की लीला का तथा मार्गी सम्प्रदाय में कांचलिया प्रवृत्ति का प्राबल्य बन गया था।

स्वामी रामानन्द तथा कबीर ने साधुओं के वेश के दम्भ को दूर करने के लिये संसार में रहकर भक्ति क़रने का उपदेश दिया, इसका सार्वत्रिक स्वीकरण हुआ। भक्ति के समान

गुजरात में कबीर की शिष्य–परम्परा [82]

कबीर

- पद्मनाभ (पाटण)
  - (शिष्य) धनराज पंडया (पाटण)
  - (शिष्य) नीलकंठदास (दूधरेज)
    - रघुनाथदास
      - यादवदास
        - षट्प्रज्ञदास
          - भाण साहेब (शेरखी) परम्परा)
            - (1)
          - लब्ध रामदास (दूधरेज) परम्परा)
  - (शिष्य) लोचनदास (सूरत)
    - समर्थदास
      - माधवदास
        - प्यारेदास
          - जोगाहरि
  - (पुत्र) माधवदास (अहमदाबाद) (परम्परा)
- ज्ञानजी (मोटासांझा)
  - ज्ञानदेव (पुत्र) (मोटासांझा) (2)
  - सोमदेव (पुत्र)
  - देवदास(शिष्य) (कबीर वट) परम्परा (3)
  - भगवानदास (शिष्य)
    - गोपालदास (शाहपुर)
      - जीवणजी (पुनियाद परम्परा) (4)
- तत्वजीवन (फतुहा गद्दी, बिहार)
- कमाल साहब (अहमदाबाद)
  - दुर्जनसाल (पाटण)
  - बाँकीदास (नांदोद)
  - वाइ (अहमदाबाद)
    - जग्गाजी (सोखडा) परम्परा
      - 5
  - स्यामदास
  - दरियाखान (अहमदाबाद)
    - झुलन फकीर
- निर्वाण साहब (सूरत परम्परा)
  - (6)

अधिकार की भावना ने निम्न जातियों में एक विशेष आकर्षण जमाया, तथा उनके आत्मगौरव के भाव को जगाकर भक्ति के ऊँचे से ऊँचे सोपान की ओर बढ़ने के लिये उनको बढ़ावा दिया।

उच्चजातियाँ उपनिषद, गीता, वेदान्त, रामायण और महाभारत से ज्ञान प्राप्ति तथा आध्यात्मिक आनंद प्राप्त करती थीं, किन्तु ग्राम्य जनता के लिये जंगमतीर्थ जैसे संतों की वाणी के सिवा अन्य कोई सबल नहीं था। संतों की यह वाणी निरक्षर ग्राम जनता में कर्णोपकर्ण फैलती जाती थी। गुजराती साहित्यकार ब.क. ठाकोर ने प्रजा का मानस तथा संस्कृति के विकास में संत साधुओं द्वारा गुजराती जन जीवन को दी गई संतवाणी की देन को सविशेष महत्व दिया है।

गुजरात में कबीर साहब के पांच प्रमुख शिष्य थे। कबीर के पुत्र माने जाने वाले कमाल साहब ने भी यहाँ निवास किया था। कमाल के भी पांच प्रमुख शिष्य गुजरात में थे। जीवणजी की परम्परा या रविभाण परम्परा का मूल कबीर की ही परम्परा है। [81]

कबीर पन्थ का प्रारम्भ कबीर के पर्याप्त पीछे हुआ था। किन्तु कबीर के समय में ही उनके शिष्य ज्ञानीजीने गुजरात में रामकबीर सम्प्रदाय की स्थापना की थी।

इस प्रकार गुजरात में कबीर की अनेक शिष्य परंपराएँ चली है। कबीर की वाणी का प्रचार पठन-पाठन से हुआ तथा इन परम्परा के सन्तों की हिन्दी तथा गुजराती वाणी पर कबीर की विचारधारा का प्रभाव स्वाभाविक रूप में पड़ा था। गुजरात में कबीर परम्परा के संतों ने हिन्दी तथा गुजराती दोनों भाषाओं में सन्त साहित्य की रचना की थी। हिन्दी में लिखा गया सन्त साहित्य हिन्दी साहित्य के इतिहास में विशिष्ट स्थान का अधिकारी होगा।

रवि भाण सम्प्रदाय

कबीर के शिष्य पद्मनाथ जो पाटण-निवासी थे, की छठ्ठी शिष्य परम्परा में भाण साहब का नाम आता है। जिनका सम्बन्ध शेरखी (वाराही के) से जोड़ा जाता है।

कबीर के बाद सौराष्ट्र में दो पंथ अस्तित्व में आये एक रामकबीरिया और दूसरा संतकबीरिया। जो पीला अंगरखा और सरपर टोपी पहनते थे और कबीर को राम का अवतार मानते थे, वे रामकबीरिया कहलाते थे। भाण साहब राम कबीरिया पंथ के मूल प्रवर्तक थे।

ये काठियावाड़ के कबीर पंथी संतों में प्रमुख एवं अत्यंत प्रभावशाली संत थे। सौराष्ट्र के जन मानस में इनका स्थान **'सोरठ नो कबीर'** के रूप में अवस्थित है। [83]

रवि भाण साहब का जन्म सं.1754 में किखलोड़ (चरोत्तर प्रदेश) नामक गाँव में हुआ था। [84] डॉ. रामकुमार इन्हें लुहाणा जाति का एवं उनके पिता का नाम ठक्कर कल्याणजी और माता का नाम अंबाबाई साध्वी मानते है। [85] इनका शिष्य मंडल भाण फौज के नाम से प्रख्यात था। इनकी शिष्य परंपरा में खीमदास तथा रविसाहब प्रमुख थे। भाण साहब के शिष्य रवि साहब इन दोनों के सम्मिलित नामों से 'रविभाण सम्प्रदाय' चल पड़ा। शेरखी के अतिरिक्त इस सम्प्रदाय की गद्दियाँ जामनगर के खंभालिया और कच्छ के रापर में मिलती है। भाण साहब के बाद इनके पुत्र और शिष्य ही विविध स्थानों की गद्दियाँ पर विराजमान हुए और आज भी सौराष्ट्र एवं कच्छ में यह परम्परा जीवित है।

इस परम्परा में मोरार साहब, खीम साहब, जीवनदास और होथी जैसे सन्त आते है।

भाण साहब का समय 1700 से 1800 ई. के मध्य माना जाता है। कबीर के 200 वर्ष बाद भाण साहब का प्रादुर्भाव हुआ। इनके उपर कबीर का गहरा प्रभाव पड़ा था। यह प्रभाव इनके पुत्र रापर के गादीपति खीम साहब और उनके प्रमुख शिष्य रविसाहब की रचनाओं और इनकी शिष्य परम्परा की रचनाओं में देखा जा सकता है।

रवि साहब ने गुरु का चरित ''भाण परिचई '' नाम से लिखा है। भाण साहब ने दूधरेज के संत षष्टम्दास से दीक्षा ली थी, तब से वे ''भाण साहब'' कहलाये उस समय भुज के राव देशलजी ने एक विशाल संत-मेले का आयोजन किया था। दूधरेज के संत षष्टम्दास वृद्धत्व के कारण जाने की स्थिति में नहीं थे। उन्होंने महाप्रतापी भाण भगत को दीक्षा देकर अपने प्रतिनिधि के रूप में भेजा था।

भाण साहब ने गुजरात के अनेक स्थोनों का भ्रमण किया था। वे सूरत के पास बन्धारपाड़ा गये वहीं पर उन्होंने रवि साहब को शिष्य बनाया था। मार्ग में बड़ौदा में बैल की चोरी के झूठे अपराध में बन्दी बनाये गये थे। कहा जाता है कि, चमत्कार से बेड़ियाँ टूट गई थी। तथा ताले खुल गये थे। इससे सूबेदार की आँखे भी खुल गई थी। उनकीं भेंट की गई शाल आज भी शेरखी मन्दिर में है। शेरखी में सं.1785 में स्थान बनाकर उन्होंने निवास

किया था। तदनन्तर उन्होंने कच्छ तथा सौराष्ट्र की यात्राएँ कीं। मार्ग में मौजुद्दीन पठान

रवि भाण सम्प्रदाय की प्रणालिका

- सतगुरु कबीर
  - पद्मनाथ साहब
    - नीलकंठ साहब
      - रघुनाथ साहब
        - यादव दास साहब
          - षष्ठम दास साहब
            - भाण साहब
              - नाद शिष्य (रवि साहब)
              - बिन्दु शिष्य (खीम साहब) [89]
            - लबध राम

उनका शिष्य हुआ । गिरनार की यात्रा में गोदड़स्वामी तथा तुलसीदास उनके साथ थे।

सं. 786 में षष्टम्दास ने समाधि ली। दूधरेज की गद्दी पर भाण साहब के गुरुबन्धु लब्धरामदास उत्तराधिकारी हुए। तानाबाई ने पुण्डरीकनाथ का मन्दिर बनवाया है, जिसमें भाण साहब की चरणपादुका की स्थापना की गई थी। [87]

भाण साहब द्वारा रचित दो ग्रंथों 1) हस्तामलक 2) रावणमंदोदरी संवाद [88] तथा कुछ पदों का उल्लेख मिलता है। सस्तु साहित्य वर्धक कार्यालय द्वारा प्रकाशित 'रवि-भाण तथा मोरारनीवाणी' में भाण साहब के कुछ हिन्दी पद संग्रहित है।

भाण साहब के अनेक शिष्य थे, जिसमें कल्याणदास रतनदास, मोहनदास, राघोदास, बादल साहब, तिलक दास, रवि साहब प्रमुख थे। ये शिष्य देहाती भाषा में विशेषकर गाँवो में लोगों को वैराग्य, गुरु महिमा, रहस्यवाद, प्रेमलक्षण भक्ति आदि का उपदेश दिया करते थे।

भाण साहेब का जन्म यद्यपि गुजरात में हुआ था तथापि उनके उपदेश का क्षेत्र सौराष्ट्र था।

प्रभावशाली वणिक युवक रवि को अपना उत्तरधिकारी नियुक्त कर सन् 1811 के चैत्र शुक्ला तृतीया को उन्होंने कमीजड़ा गाँव के तालाब पर जीवन्त समाधि लेली। [90] इन रवि जी की इतनी उन्नति हुई कि ये बहुत प्रसिद्ध हो भाण साहब के योग्य शिष्य सिद्ध हुए। बाद में ये रविसाहब कहलाए ।

रविसाहब

रविसाहब के शिष्य मोरार साहब ने अपने एक शिष्य सुन्दरदास को रवि साहब का चरित्र कहा था। तदुपरान्त "**भाण-चरित्र प्रकाश**", "**भाण-परचरी**", "**भाण लीलामृत**", "**सत्पुरूष - चरित्र-प्रकाश**", "**रविराम चरित्रामृत**" तथा दुलाराम के **संत चरित्र-प्रकाश** में रवि के जीवन का उल्लेख है। श्री माणेकलाल राणाने रविसाहब का चरित्र लिखा है।

सौराष्ट्र में कबीर के समकालीन संत रैदास तथा भाण शिष्य रविसाहब के पद प्रचलित है। आचार्य सेनने दोनों को एक माना है। दोनों रविदास के मध्य तीन सौ वर्ष का

अन्तर है। श्री जयमल परमार ने रविसाहब के विषय में लिखा है, कि वह पूर्वावस्था में सूदखोर, धूर्त तथा हरि-विमुख बनिया था, [91] किन्तु श्री माणेकलाल राणाने इसका विरोध किया है, तथा लिखा है, कि बचपन से संत के लक्षण उनमें दिखाई देते थे। [92]

''रवि-भाण संप्रदाय'' के सुप्रसिद्ध संत कवि रविदास का जन्म डॉ. अम्बाशंकर नागर [93] एवं डॉ. रामकुमार गुप्त [94] संवत् 1783 में आमोद तालुका के तण्छा गाँव के एक वैश्य परिवार में मानते हैं। व्यवसाय से ये सूदखोर वणिक थे, जिन्हें भाण साहब के सदुपदेशों से सांसारिकता से विरक्ति हो गयी और आगे चलकर यही रवजीबनिया संत रवि साहब के नाम से प्रसिद्ध हुए। रवि साहब के पिता का नाम मनछाराम तथा माता का नाम इच्छाबाई बताया जाता है। [95]

संवत 1809 के वर्षोत्तर में इन्होंने भाण साहब से दीक्षा प्राप्त की [96] भाण साहब द्वारा रोपे हुए बीज को वस्तुतः अंकुरित एवं पुष्पित किया रवि साहब ने ही। भाण साहब की तरह इनके शिष्यों की संख्या भी काफी थी। गुजरात में लोहना जाति में रवि साहब के सात हजार अनुयायी थे। उन्नीस शिष्य हमेशा उनके साथ रहते थे।

''उनबीसी रविदास की अनभेपद हितकार

भजन, भक्ति, सत्संग में, बहुनामी बलिहार ॥'' [97]

रवि साहब के शिष्यों में मोरार साहब, गंग साहब, लाल साहब, रामस्वामी, केशव स्वामी, स्यामदास, सुजानसिंह, मेहाजल, मौनीराम, राजुल, जोगीराम, दयालदास, सांगाजी, मेरमदास, रूपाल तथा हुलनदास प्रमुख हैं। [98] बाबा मोतीराम हाड़ाजी, लाभा भक्त, डींगाराम तथा तोबाजी जैसे भील शिष्य भी थे।

''चन्दुर'' गाँव में भाण साहब के भाई कहानदास की पुत्री स्यामबाई विधवा थी। उसने रविसाहब से दीक्षा लेकर ''स्यामदास'' नाम रखा था। उसकी परम्परा इसी गाँव में प्रवर्तमान है। पिपलोद में भगवानदास को नियुक्त किया गया था। सूरत में मंछाराम तथा बंसीराम उनके शिष्य हुए थे। [99]

रवि साहब ने गबल कोली, कबाजी, बाहिल तथा कादरशाह (कादर बुकानी) जैसे भयंकर लुटेरों को भी उपदेश देकर संत बनाये थें। कादर बाबा कादरशाह के नाम से प्रसिद्ध

हो गया। उसने संतवाणी की रचना भी की थी।

रवि साहब ने हिन्दी तथा गुजराती दोनों भाषाओं में विपुल साहित्य की रनचा की है। इनकी हिन्दी रचनाओं की भाषा सधुक्कड़ी है। इनके हिन्दी ग्रंथों में ''बोध चिन्तामणि'', 'राम गुंजार चिन्तामणि' , 'आत्मलक्ष चिंतामणि', 'भाण प्रश्नोत्तरी'(सुर की भ्रमरगीत शैली पर) रविगीत हैं। फुटकर काव्य में गुजराती ग्रंथों के बीच प्राप्त साखियाँ, स्फुट पद, उलटबासियाँ इत्यादि है। रवि साहब ने लगभग ढाई हजार साखियों की रचना कि है जो विभिन्न 69 अंगों में विषयानुरूप विभाजित है।[100] साखियों में आध्यात्मिकता के साथ-साथ सामाजिकता का भी महत्वपूर्ण स्थान है। इनके ग्रंथों के मुख्य विषय योग साधना, ब्रह्मसाधना, आदि है। इन्होंने वैराग्य बोध, मस्ती, फक्कड़पन, प्रेममय भक्ति, गुरू महिमा एवं आध्यात्मिक अनुभूतियों को ही अपनी वाणी का प्रमुख आधार माना है।

डॉ. नागर एवं डॉ.पाठक ने इनकी रनचाओं का विश्लेषण करते हुए लिखा है कि ''इनकी रचनाओं में एक ओर जहाँ पनिहारी, पिया, बालम, प्रेम लहर आदि शब्दों के प्रयोग द्वारा मधुर भावों की अभिव्यक्ति हुई हैं, वहाँ दूसरी और अकथ कहानी, अणलिंगी, द्वारा गूढ़ ब्रह्मज्ञान की भी अभिव्यक्ति हुई है।'' [101]

इस सम्प्रदाय के काव्य पर विस्तृत अनुसंधान अपेक्षित है। रवि साहब की गूढ़ ज्ञानयुक्त काव्य शैली का एक उदाहरण प्रस्तुत है-

संतों बूजे बावन धाए।

जाके हरदे गुरु प्रगटे, सो खेले चोधारा।

पाँच पचीश परिब्रह्म से उपजे, स्याना समजी जावे।

चोइ दिशे सोइ रमे अकेला, अपने नाम चलावे

आदि आदि [102]

रवि साहब कृत **''बोध चिन्तामणि''** की हस्त प्रप्ति द्वारा उदधृत एक उदाहरण देखिए

''संतगुरु के परताप से, खोजा पिंड ब्रह्मांड।

परमसुन में परमतंत है, दरसा गहे निसाण ॥ 103''

रवि साहब की शिष्य परम्परा [107]

- मोरार (जामनगर खंभालिय में गद्दी स्थापित की)
  - (1) बालाजी रामजी (बम्बई में गद्दी) छोटालाल
  - (2) अग्रमदास जाम खंभालियामें
    - -चरणदास - 1927
    - -जेरामदास - 1939
    - -रणछोडदास - 1955
    - - ओधवदास -1964
  - (3) होथी
  - (4) जीवा
- रामदास (शेरखी की मुख्य गद्दी)
  - वालदास - 1888
  - रेवादास - 1910
  - राधिकादास - 1928
  - राघवदास - 1959

डॉ. रामकुमार गुप्त ने रवि साहब द्वारा रचित ''गुरु माहात्म्य''(लघु रचना) तथा विमलसन्त वाणी नामक ग्रंथ का भी उल्लेख किया है।[104]

रवि साहब की वाणी कबीर वाणी की परम्परा में लिखी गई है। उस पर कबीर साहब की वाणी तथा विचारों का प्रभाव परिलक्षित होता है। एक दृष्टान्त उपयुक्त है।

कबीर–गूँगें केरी सर्करा खावे और मुसकाय।

रवि –गूँगे साकर गली गलामा, समझ समझ मुसकाय।

रवि की वाणी में राम का नाम, नाम-जप, अजपाजप तथा भक्ति के दर्शन होते हैं। ''**साधु जल में ज़्योत जलाया**'' तथा ''**बिन दूध झरे, मुख बिन बच्चा पिये,**'' ''जैसे पदों में उलटबांसी का रूप दिखाई देता है। ''**संतों ! निर्गुण की गत न्यारी**'' में निर्गुण भक्ति का तथा ''**प्रीतम ! बसे मारी पासे**'' में आत्मतत्व का निर्देश मिलता है। उनका एक गुजराती पद ''चरखो'' गुजरात में विशेष प्रसिद्ध है।

अपने जीवन के अंतिम समय में इन्होंने अपने प्रिय शिष्य मोरार साहब के निवास स्थान जामखंभालिया में समाधिस्थ होने की अन्तिम इच्छा प्रकट की थी।[105] खंभालिया जाते समय वाँकानेर में अचानक बीमार पड़ जाने से रवि साहब को जामखंभालिया ले जाया गया जहाँ उन्हें समाधिस्थ किया गया । उनकी समाधि पर रामचन्द्र जी का मंदिर बना हुआ है।[106]

मोरार साहब

थराद (मारवाड़) के बाघेला वंश के राजकुमार मोरार का जन्म सं. 1814 [108] में हुआ था। मोरार साहब ने शेरखी आकर रवि साहब से दीक्षा ली थी। उनकी माता का दुःख देखकर रविने उनको घर जाने की आज्ञा दी। गुरु के वियोग में उन्होंने ''सद्गुरु वियोग'' लिखा था। सं.1842 में संसार से निवृत्त होकर जामनगर के पास खंभालिया में स्थान बनाकर निवास किया।

जामनगर के राजा रणमलजी उनको बहुत मानते थे, उनकी सहायता से एक विशाल संत मेले का आयोजन किया गया। सं. 1904 में वे समाधि लेने की तैयारी करने लगे थे।

जामनगर के राजा रणमलजी ने उन्हें कहा कि यदि आप जीवंत समाधि ले लेंगे, तो मैं आत्महत्या कर लूँगा। अंदर श्री फल रखकर समाधि बंद कर दी गई। मोरार साहब मान गये, किन्तु सं.1905 चैत्र शुक्ल द्विवतीया के दिन समाधि खुलवाकर अचानक उन्होंने समाधि ले ली।

राजकोट में गवर्नर जनरल के एजेन्ट को समाचार मिले। उसने जामनगर के राजा पर मुकदमां किया। एक वर्ष बाद अदालत ने फैंसला दिया कि समाधि खुदवाई जाय। लोग सुनकर काँप उठे। अंग्रेज अधिकारी ने राजा से समाधि खुलवाने को कहा, किन्तु उन्होंने इन्कार किया, तब वह स्वयं सेना के एक छोटे दल के साथ गया। वहाँ समाधि के पास पहुँचने पर उसने देखा, कि मोरार साहब स्वयं समाधि पर बैठे है। उसने अपनी टोपी उतार कर बार-बार नमस्कार किया। उसका सारा गर्व गल गया। वह स्थान आज भी ''मोरार साहेब का खंभालिया'' के नाम से प्रसिद्ध है। [109]

मोरार साहब के अनेक शिष्य थे, उनमें से दासहोथी, दलूराम, चरणदास, सुन्दरदास, जीवा-भक्त तथा सांई करीमशा विशेष उल्लेखनीय है। मोरार साहबने संत वाणी की रनचा की है।

इनके द्वारा हिन्दी, गुजराती भाषाओं में लिखी रचनाओं में **'सद्‌गुरु विरह'**, **'गुरु महिमा'**, **'चिंतामणि'**, **'बारहमासी'**, **'धोक'** तथा अन्य फुटकल पद है। इनकी भाषा पर सोरठी-गुजराती, अरबी फारसी का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। इनकी रचनाओं में ज्ञान, भक्ति वैराग्य, विरह, रहस्यात्मकता, ब्रह्मभिमुखता आदि भावनाओं का सुन्दर वर्णन मिलता है।

''मेरे प्रीतम चले परदेश

जीवन मैं कैसे जीव?

साचुँ कहुँ तो में संग चलुँगी।

हाँ रे में दिल किया दरवेश।'' [110]

लालदास साहब (प्र.सं. 1791 ति.)

पाटण के एक लोहाणा जाति के भक्त मनहर और उनकी पत्नी लक्ष्मीको लाल,

पचाण तथा आसु नाम के तीन पुत्र थे। लाल का जन्म सं.1797 में हुआ था। रवि साहब के भजनों से प्रभावित होकर वे शेरखी उनके दर्शन हेतु गये, वहाँ रवि साहब से दीक्षा प्राप्त करी। रवि साहब की आज्ञा से उनको एक शिष्य धर्मदास को साथ लेकर उन्होंने पाटण में निवास किया था ।

लाल साहब के विषय में फसल बचाने की, गायों को लौटाने की तथा एक भक्त के पुत्र को सजीवन करने के चमत्कार की कथा कही जाती है। लाल साहब बड़े प्रतापी संत थे।

अपने गुरु बंधु धर्मदास को चेवली गाँव में जाकर स्थान बनाने की आज्ञा दी थी। वहाँ धर्मदास ने नरसिंह दास को अपना शिष्य नियुक्त किया था। शिष्य रामदास को गृहस्थ धर्म के पालन की आज्ञा दी। मामाँथल में आकर उसने निवास किया। एक अन्य रामदास राम के बड़े भक्त थे। जप करते-करते वे साकेतवासी हो गए। उनके शिष्य मीठादास को लाल साहब ने अपने पास रख लिया। शिष्य हिमदास को सौराष्ट्र में अमरेली में स्थान बनाकर निवास करने का आदेश दिया। प्रेमदास तथा बालदास नाम के अन्य शिष्य भी थे। एक जाट लुटेरा आसोजी उनके प्रभाव से परम भक्त बन गया। मारवाड़ के मुरधर में उनके अनेक अनुयायी थे। अनेक चमत्कार की कथाएँ उनके चरत्रि के साथ जुड़ी हुई हैं। मुरधर में जिसने उनका ऊँट लिया था, उसका छप्पर उड़ने लगा था तथा ऊँट दिखाई पड़ा था। [111]

अपने प्रिय शिष्य मीठादास को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त कर सं.1889 की माघ शुक्ला एकादशी के दिन लाल साहब ने जीवन्त-समाधि ली; वह स्थान पाटण में वर्तमान है।[112] लाल साहब ने हिन्दी तथा गुजराती भाषा में संतवाणी की रचना की है। हिन्दी में उन्होंने रेख्ता, सवैया, दोहा, चोपाई तथा पदों की रचना की है।

अपने एक पद में लालसाहब ने रविगुरु के साथ आदि सद्गुरु कबीर-साहब का

''बन्दी-छोड़'' नाम से उल्लेख किया है।

रवि साहब हिरदे बसो, किंकर कहे कर जोड़।

'लालदास' की विनति, सुनि हो बंधी-छोड़ ॥

लाल साहब की वाणी समर्थ तथा प्रभावशाली है। उनके एक रेख्ता में कबीर या कमाल की भाषा की परम्परा का दर्शन होता है।

शब्द गुरु ज्ञानका, सत् शमशेर है, मार मैदान पर, घेर घेरा।

आव बे आव तू, अमका दम पर, नजर भर देख, साहेब तेरा।

शब्द की सैन में, शब्द समझाई ले, शब्द ही संत है, और माया

'लाल' के तख्त पर, तंत लाली लगी, लाल से लाल मिल पुरुष पाया। [113]

लाल साहब की वाणी समर्थ तथा प्रभावशाली है। उनके एक रेख्ता में कबीर या कमाल की भाषा की परम्परा का दर्शन होता है।

चेत बे चेत अचेत क्यों आंधरो, आज अरु काल में उठ जाई।

मोहका सोहमें सार नहीं सुधकी, अंध के अंध में उठ गाई।

कालुक मारकर, कुबुद्धि को रोधकर, भरमके कोट को मांग भाई।

सबर कर, सबर कर, खोज ले नामको, याद कर शब्द को, संभाल भाई ॥ [114]

खीम साहब (सं. 1790-1857 वि)

खीमदास रविभाण सम्प्रदाय के संस्थापक भाण साहब के पुत्र दादूपंथी संत खेमदास से भिन्न है। भाण साहब के पुत्रों द्वारा स्थापित बिंदु शाखा के प्रथम संत खीम साहब का जन्म सं.1790 में हुआ था। [115] उन्होंने रवि साहब से दीक्षा ग्रहण की थी। कच्छ के पास समन्दर तट पर 'रापर' में उनका स्थान है। वहाँ के मछुआ जाति के लोगों में उन्होंने रामकबीर-सम्प्रदाय का प्रचार किया था। उनको लोग दरिया-पीर कहते थे तथा सागर में जाने से पूर्व उनके आशीर्वाद ले जाते थे।

उनके समकालीन बाबा दीनदरवेश ने अपनी एक कुण्डलिया में उनकी पीर के रूप

खीम साहब की शिष्य परम्परा

कमींजडा की गादी

- त्रिकमदास
  - भीम
  - जीवन दासः दासी जीवणदास
- रामदास : कमींजडा की गद्दी
  - लालदास 1942-52
  - विष्णुदास 1952-66
  - देवीदास 1970-84
  - हीरादास 1984

खीम साहब

रापरः कच्छ की गादी सं. 1837 में स्थापित

- गंगाराम (खीम साहब का पुत्र रापर की गादी) 1957-1931
  - सुन्ददास : भाण परचरी के अन्तिम चार विश्राम के रचयिता
  - मोहन दास -1946 में समाधिस्थ
  - अमरदास-1987
  - रघुवरदास-1987
  - वीरदास-187 से....
- मलकदास (अजमेर में गादी)
  - केशवदास
    - सन्दरदास
    - वल्लभदास
  - पुरुषोत्तम दास

में प्रशस्ति की है।

खीम साहब के पेखिया, प्रगट बखानो पीर।

ऐसे संत सुजान को, बंदही दीन-फकीर ॥ [116]

समन्दर के तूफान में खीम साहब को याद करने से हैबत नाम के मछुए की नाव बच गई थी, इससे प्रभावित होकर वह खीम साहब का शिष्य हो गया था। त्रिकम नामका गरोडा-हरिजन् उनका शिष्य था, उनकी समाधि खीम की समाधि के बगल में है। उनके अन्य शिष्यों में मेघा खाचर, हरजीवनदास तथा भक्तिराम विशेष उल्लेखनीय हैं।

खीम साहब ने सन्तवाणी की रचना की है। उनके पदो में हिन्दी तथा गुजराती भाषा का मिश्रण हुआ है। उनके एक हिन्दी गुजराती पद में से कुछ हिन्दी पंक्तियाँ उद्धत की गई है।

साधु! भेद अगम केरा पाया ।
शून्य मण्डल में नोबत बाजे, अखण्ड आप बिराजे
कहां से आया, कहां जायगा, कौन तुम्हारा ठामा ॥
'सत्य ' शब्द से ध्यान लगावा, आध नाम निरधार्या
'खीमदास' सद्गुरु प्रतापे, ओहं सोहं के पारा ॥ [117]

सं. 1857 में रविसाहब की उपस्थिति में खीम ने जीवन्त समाधि ले ली। वह समाधि कच्छ के रापर में वर्तमान है।

इन तमाम धर्म समुदायों के संतकवियों के काव्य भाव सम्पदा की द्रष्टि से समान्तर भावबोध पर ही अनुभव हुए हैं इनमें सद्भावना, समर्पण, करुणा, ममता, उदारता, त्याग, दान, विवेक, चिन्ता, आस्था विश्वास, मनन आदि उद्दात भावों सन्धिवेश रहा है। गुजरात की संस्कृति पर इन्हीं संत कवियों के प्रभाव से सर्वधर्म समभाव की उदारता समन्वित हुई है। गुजरात् में प्रायः सभी सम्प्रदायों के धर्म केन्द्र स्थापित हुए हैं और उनके आचार्य अथवा अनुयायी यहां आते रहे हैं तथा समन्वित ऐक्य की धारा को अग्रसर करते रहे हैं।

अगले अध्याय में गुजरात के धर्म सम्प्रदायों में व्यवहृत हिन्दी के विविध रुपों को समीक्षित करेंगे।

संदर्भ - सुची

1. Dpctrine of the Sufism, 10.78
2. ऐवरीमैन्स एनसाइक्लोपेडियां भाग 1-2 पृ. 54
3. डॉ. जयदेव, सूफी महाकवि जायसी, पृ. 264
4. सूफी मत साधना और साहित्य-पृ.409-10
5. मध्यकालीन हिसाहित्य पुनरीक्षण, प्रथम संस्करण, 1998 में प्रो. अल्लाबख्श शेख का लेख पृ.89-90
6. गुजरात की हिन्दुस्तानी काव्यधारा - डॉ. नागर और प्रो. अल्लाबख्श शेख, पृ. 21
7. हिन्दी भाषा और साहित्य के विकास में गुजरात का योगदान डॉ. अम्बाशंकर नागर अभिनन्दन ग्रन्थ पृ. 99
8. मध्यकालीन हिन्दी साहित्य : पुनरीक्षण, 1998, पृ.441
9. गुजरात की हिन्दी सेवा-डॉ. अम्बाशंकर नागर
10. उर्दू की इब्तेदाई नकवोनुमा में सूफियाये किराम का काम डॉ. अब्दुल हक, पृ.54
11. गुजरात की हिन्दी काव्यधारा, पृ.12
12. गुजरात की हिन्दी सेवा से उद्घृत
13. गुजरात की हिन्दुस्तानी काव्य धारा - पृ.20
14. मध्ययुगीन सूफी और संत साहित्य में जावाहर-उल-इसरारेअल्ला, भागवत रहस्य सार नाम मिलता है।
15. हिन्दुस्तानी काव्य धारा पृ.27
16. दविखनी हिन्दी काव्य धारा पृ. 121
17. उर्दू की इब्तेदाई नकवोनुमा में सूफियाये किराम का काम डॉ. अब्दुल हक पृ. 58
18. देखिए उर्दू की इब्तेदाई नकवोनुमा में सूफियाये किराम का काम- डॉ. अब्दुल हक, पृ. 54 और डॉ. अम्बाशंकर नागर अभिनन्दन ग्रंथ में पृ.100
19. गुजरात की हिन्दुस्तानी काव्यधारा पृ.4।
20. हिन्दी भाषा और साहित्य के विपस में गुजरातका योगदान डॉ. रामकुमार गुप्त पृ.102
21. गुजरात की हिन्दुस्तानी काव्य धारा -पृ. 37
22. देखिए : प्राणलाल कृपाराम देसाई सम्मान अंक गुण पृ.133
23. हिन्दी भाषा और साहित्य के विकास में गुजरात का योगदान पृ. 103
24. मध्य युगीन सूफी और संत साहित्य पृ. 92
25. मध्यकालीन हिन्दी साहित्य अध्ययन एव अन्वेषण पृ.99
26. मध्यकालीन हिन्दी साहित्य -पृ. 102
27. गुजरात के संतो की हिन्दी साहित्य को देन पृ. 138
28. हिन्दी साहित्य द्वितीय खण्ड संपा.
29. गुजरात के संतो की हिन्दी साहित्य को देन, पृ. 138।
30. गुजरात के संतो की हिन्दी साहित्य को देन पृ. 139

31. उत्तर भारत की संत परम्परा पृ.604
32. अ. वही 593 ब. कैम्ब्रिज हिदी आंफ इण्डिया वा.4, पृ.
33. कीर्तन की वाणी सजबख्श पृ. 1
34. हिन्दी साहित्य की दार्शनिक पृष्ठभूमि पृ. 204
35. कुलजम स्वरूप, प्रकाश प्राणनाथ, प्र. 37, चौ.62
36. रामणलाल पाठक, गुजरात के हिन्दी साहित्य का इतिहास
37. प्राणनाथ सम्प्रदाय एवं साहित्य पृ. 149
38. उत्तर भारत की सन्त परम्परा पृ. 594
39. गुजरात की हिन्दी सेवा शोध निबंध पृ. 216
40. श्री छोटी वृत्त, संपा. ब्रह्मचारी मंगलदास शर्मा, पृ. 122
41. प्राणनाथः सम्प्रदाय एवं साहित्य, पृ. 159.
42. छत्रसाल ग्रंथावली (भूमिका) सं. श्री वियोगी हरि पृ. 15
43. बुन्देल खण्ड का संक्षिप्त इतिहास पृ. 228
44. श्री प्राणनाथ सन्देश (पत्रिका) प्रणामी साहित्य अंक पृ. 51
45. वृत्तान्त मुक्तावली (भूमिका) ब्रज भूषण पृ. 12
46. श्री सर्वेश्वर, वृन्दावन अंक, पृ. 100
47. बख्शी हंसराज कृत श्री मिहराज चरित्र, भूमिका, संपा शास्त्री देव कृष्ण शर्मा पृ4
48. प्रणामी धर्म पत्रिका मुकुन्द वाणी, अंक जुलाई 1958 पृ. 4
49. प्राणनाथ सम्प्रदाय एवं साहित्य पृ. 176
50. श्री निजानंद भजन सागर, पृ. 30
51. मिश्रबन्धु विनोद (द्वितीय भाग) मिश्रबन्धु पृ. 565
52. प्रणामी धर्म परिका उपदेशांक सं. 1999 (अश्विन) पृ. 83
53. डॉ. रमणलाल पाठक, गुजरात के हिन्दी साहित्य का इतिहास पृ. 177
54. अ) भाई रामजी भोजा द्वारा प्रकाशित पत्रिका सं.1980 पृ.10
ब) श्री प्राणनाथ संदेश जागृति अंक, पृ.9
55. पं. प्योरलाल और श्री कृष्णप्रियाचार्यजी महाराज के प्रत्यक्ष मुकाकात के आधाक पर।
56. प्राणनाथ सम्प्रदाय एवं साहित्य पृ. 150
57. प्राणनाथ, कुलजमस्वरूप, षट्ऋतु, पृ.1 चौ. 10-11
58. प्राणनाथ, कुलजमस्वरुप, कलश, प्र.43 चौ.26
59. प्राणनाथ कुलजमस्वरूप, सनंध, प्र.1 चौ. 11-15
60. श्री प्राणनाथ संदेश (पत्रिका) प्रणामी साहित्य अंक
61. प्राणनाथ, कुलजम स्वरूप, किरंतन, पृ.15, चौ.4-5
62. प्राणनाथ, कुलजमस्वरुप, खुलासा, प्र.12 चौ. 42-44
63. सं. ब्रह्मचारी मंगलदास शर्मा श्री छोटी वृत्त, पृ. 122
64. सं. धीरेन्द्र वर्मा-ब्रजेश्वर वर्मा, हिन्दी साहित्य, (द्वितीय खण्ड) पृ. 591
65. हिन्दी साहित्य को गुजरात के संतकवियों की देन पृ. 126

66. श्री प्राणनाथ संदेश (पत्रिका) प्रणामी साहित्य अंक, पृ51
67. हिन्दी कृष्ण काव्य में साधु योपासना पृ. 369
68. प्राणामी धर्मपत्रिका मुकुन्दवाणी अंक, जुलाई 1958, पृ. 49
69. वही. पृ.66
70. वही. पृ. 75
71. प्रणामी धर्म पत्रिका, सं. 1993, ज्येष्ठ अंक पृ.3
72. वही. पृ.3
73. हिन्दी निर्गुण काव्य पृ. 24-25
74. जगगुरु श्री रामानन्दाचार्य, श्री रामानन्द पाठ आबूसे प्रकाशित ग्रंथ के आधार पर।
75. गुजरात के सन्तों की हिन्दी साहित्य को देन पृ. 56
76. Gujarat and It's Literature -Dr. K.M. Munshi Page-116
77. हिन्दी काव्य में निर्गुण संप्रदाय डॉ.बडथ्याल पृ.99
78. रामानन्द साहित्य तथा हिन्दी साहित्य पर उसका प्रभाव ।
79. प्राचीन भारत का समाजिक इतिहास पृ. 734
80. वही पृ. 734
81. कबीर परम्परा गुजरात के संदर्भ में पीठि का पृ.4
82. कबीर परम्परा गुजरात के सन्दर्भ में पृ. 33
83. मध्यकालीन हिन्दी और गुजराती निर्गुण काव्य - डॉ.पी.एस.भोई पृ.66
84. कृ.स. क. खूलेराय काराणी पृ. 149
85. हि.सा.गु. सं.क.दे. पृ. 145
86. आचार्य परशुराम चतुर्वेदी पृ. 291
87. संत भाण साहब पृ.81
88. भजनसागर भाग 1-2 और अध्याय भजनमाला भाग-2 सं.1959
89. संत भांग साहब, पृ. 108
90. आपणी लोक संस्कृति पृ. 126
91. संत रविसाहब पृ. 25
92. गुजरात के संतो की हिन्दी वाणी पृ. 134
93. हिन्दी साहित्य को गुजरात के संतो की देन पृ. 153
94. भारत के संत महात्मा पृ.718
95. रविभाण सम्प्रदाय की वाणी पृ. 4
96. कबीर परम्परा गुजरात के संदर्भ में, पृ.131
97. वही. पृ. 131
98. गुजरात में कबीर परम्परा पृ. 131
99. गुजरात के संतो की हिन्दी वाणी डॉ. अम्बशंकर नागर एवं डॉ. रमणलाल पाठक पृ. 134
100. वही. पृ144
101. गुजरात के संतो की हिन्दी साहित्य को देन, पृ. 154

डॉ. गुण्ठ डाह्याभाई पुस्तकालय नड़ियाद में सुरक्षित हस्तप्रति से उदघृत

102. वही. पृ.156

103. आ. परशुराम चतुर्वेदी, पृ. 291

104. रविभाण सम्प्रदाय नी वाणी, पृ. 10

105. वही, पृ.10

106. कच्छ का संतो अने कवियो, पृ. 171

107. गीता पत्रिका, 1981

108. रविभाण अने मोरारनी वाणी, पद 25, पृ. 72

109. भाण-चरित्र प्रकाश के आधार पर।

110. आधुनिक गुजरात संतो पृ. 29

111. रवि भाण सम्प्रदाय की वाणी, पृ. भाग-1

112. कल्याण संत वाणी अंक, पृ. 453

113. कव्याण भक्तांक, पृ. 701

114. बाबादीन दरवेश श्री माणेकलाल राणा, पृ.331 फा. 10

115. परिचित पद संग्रह पृ. 100

116. बाबादीन दरवेश श्री माणेकलाल राणा, पृ. 331 फा.10